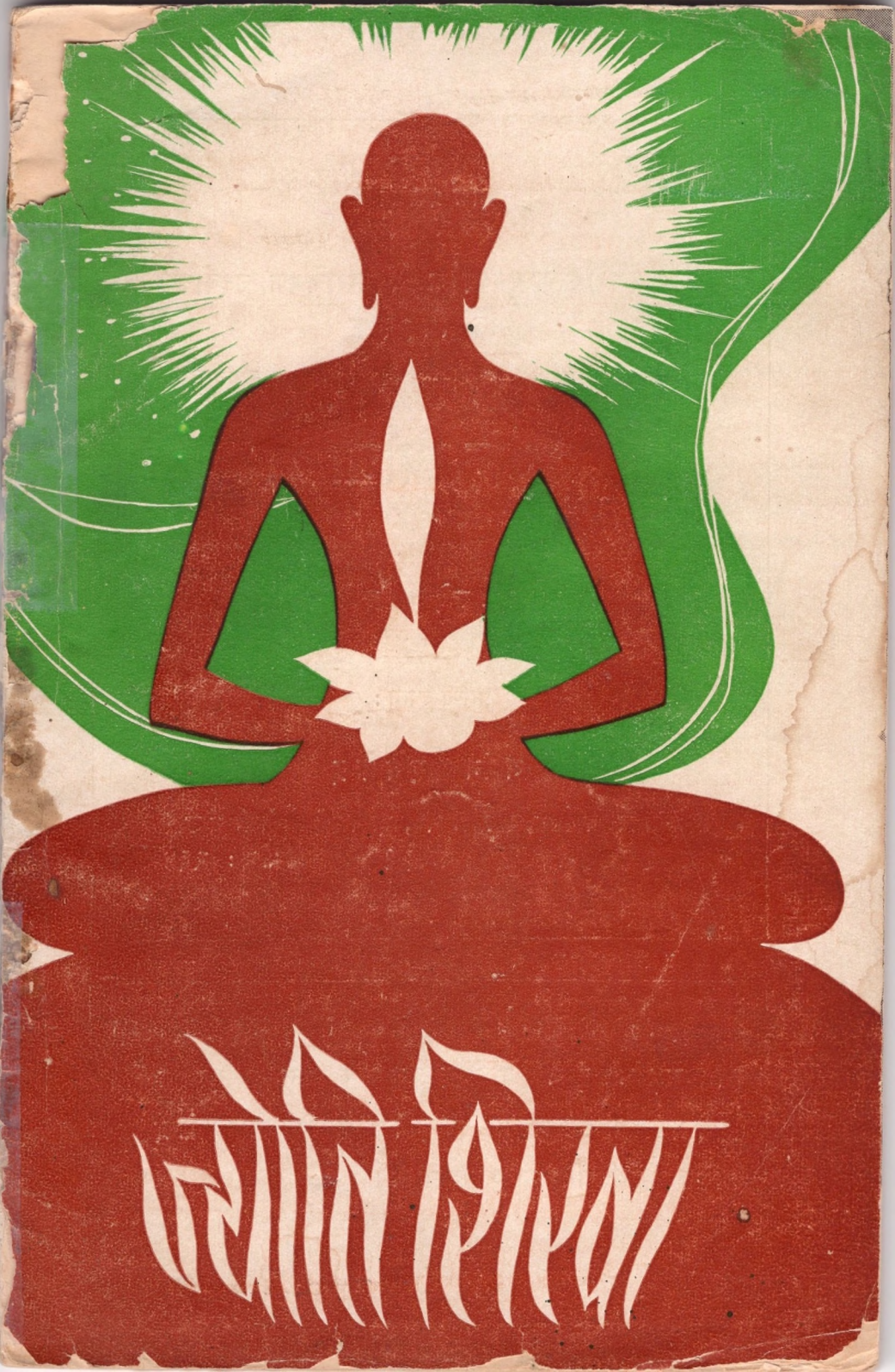
ज्योति शिखा

नया प्रकाशन

आचार्यश्री रजनीश के युगप्रवर्तक, विचारोत्तेजक उद्‌बोधनों की प्रतिनिधि पुस्तक

अन्तर्यात्रा

मूल्य : साढ़े तीन रुपये

प्राप्ति स्थान :

जीवन जागृति केन्द्र

एम्पायर बिल्डिंग, रूम नं. ५३, दादाभाई नौरोजी रोड,
बम्बई-१ फोन : २६४५३०

आचार्यश्री रजनीशजी के सारे साहित्य और पुस्तकों का सर्वाधिकार जीवन जागृति केन्द्र बम्बई के अन्तर्गत सुरक्षित है। किसी प्रकाशन तथा अनुवाद की सुविधा के लिये बम्बई केन्द्र की लिखित अनुमति नितान्त आवश्यक है।

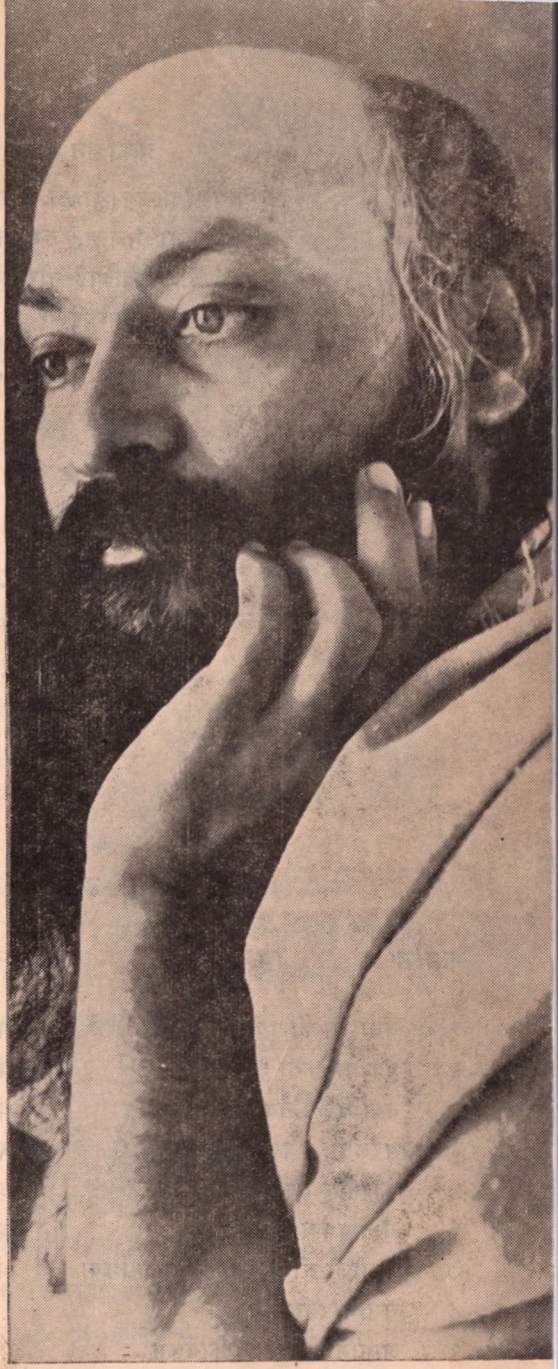

ज्योति शिखा

आचार्यश्री रजनीश की अमृतवाणी का त्रैमासिक संकलन

★

अंक : १५ वां

दिसम्बर १९६९

★

मान्यक सम्पादक :

महीपाल

प्रो. अरविन्द

वार्षिक शुल्क : रु. ५

एक प्रति : रु. १.२५

जीवन्तु शरदः शतम्

(जन्म-दिवस : ११ दिसम्बर)

प्रकाशन स्थल :

एम्पायर बिल्डिंग (वी. टी. स्टेशन के सामने)
पहला मंजला, रूम नं. ५३,
डा. दादाभाई नौरोजी रोड,
बम्बई–१

फोन : २६४५३०

★

मुद्रण स्थल :

स्टेट्स पीपल प्रेस,
फोर्ट, बम्बई–१

★

अनुक्रम

क्रमांक	विषय	संकलक	पृष्ठ
१	बधाइयों की पृष्ठभूमि में	सम्पादक	५
२	एक प्रेम कथा	श्री महीपाल	६
३	नया वर्ष : नया संदेश	श्री हिम्मत जोशी	९
४	सरलता, सजगता और शून्यता	श्री कस्तूरलाल गांधी	२१
५	काश्मीर (यात्रा-संस्मरण)	श्री किशोरीरमण टण्डन	४३
६	मैं न पथ पहचानता हूं...	श्री माणिक बाफना	५३
७	गांधीजी की अहिंसा की शल्य-क्रिया	श्री लहरचंद शाह	७१
८	समाचार विभाग	... ...	९०
९	आगामी देशव्यापी कार्यक्रम	... ...	९७

११ दिसम्बर

आचार्यश्री रजनीश के ३९ वें जन्मोत्सव पर

बधाइयों की पृष्ठ भूमि में

आचार्यश्री ने इस विश्व के अभी कुल अड़तीस बसन्त निहारे हैं। किन्तु इस निहारने में जाने कहां कहां और किन किन अज्ञात और अदृश्य जगतों की बहारें अपने में समाहित कर ली हैं कि स्वयं एक सदाबहार प्रसून के रूप में खिलकर जीवन की उपत्यका में एक सघन विश्रामस्थल बन गये हैं; जिसकी गहरी शीतल छाया में जगती का कोई भी थका-हारा व्यक्ति दो घड़ी विश्राम करके, पूर्ण शान्ति में, पुनः अपनी आगे की यात्रा का मार्ग निर्धारित कर सकता है, पूछ सकता है, जान सकता है। ऐसे परम पुनीत, पूर्ण प्रज्ञावान, अपूर्व और महान व्यक्तित्व के प्रति सद्भावना और मंगल कामना के दो शब्द भी व्यक्त करना धृष्टता होगी—एक बहुत ही छोटी बात होगी। फिर भी उद्वेगवश किन्तु अत्यंत विनम्र निवेदन के साथ इतना अवश्य कहना चाहूंगा कि इस करुण-प्रवाहिनी सरित के तट इतने विशाल से विशालतर होते चले जायं कि जिसके पुलकभरे स्नेह-स्पर्श से कोई भी प्रकट, अप्रकट, जड़ अथवा चेतन अछूता और वंचित न रह जाय।

उनके उदार अन्तःकरण से निरन्तर प्रसारित होता हुआ संदेश भी यही है—"मेरा प्रेम तो यही कहता है कि जो मेरे पीछे जगत में आ रहे हैं वे सब भांति मेरे आगे बढ़ें। उनकी आत्मा हमसे उज्ज्वल हो! उनके विचार हमसे निर्मल हों। उनकी आंखें उन सत्यों का साक्षात्कार करें जो हम नहीं कर सके। और उनके चरण उन अज्ञात पथों का स्पर्श करें जो हमें स्वप्न में भी ज्ञात नहीं थे।" शत-शत अभिनन्दन और शत-शत वन्दन के साथ—

—सम्पादक

ज्योति शिखा

☆ त्रैमासिक संकलन ☆

एक प्रेम कथा

आचार्यश्री ने कहा :

दूरी प्रेम बढ़ाती है, पर प्रेमी निकट रहना चाहते हैं। प्रेमी जो बड़ी से बड़ी गल्ती कर सकते हैं जिन्दगी में वह है निकट रहने की, चाहे कितना ही बड़ा प्रेम हो।

रवीन्द्रनाथ का एक उपन्यास है 'आखिरी कविता'– पढ़ने जैसा है। उसमें अमित एक युवक है और लावण्य एक अन्य पात्र है। लावण्य से अमित का प्रेम है। वह प्रेम बढ़ा है धीरे धीरे। आगे चलकर लावण्य का विवाह तो करते हैं लेकिन एक ही शर्त पर–– साथ नहीं रहेंगे। झील के इस पार मैं रहूंगी, झील के उस पार तुम रहोगे। कभी झील के किनारे घूमते आकस्मिक मिल जाएंगे (आकस्मिक वो बात अलग है) तो किसी झाड़ के नीचे बैठकर, दो प्रेम की बातें कर लेंगे। या कभी तुम बुलाओगे, निमंत्रण दोगे, तो किसी रात तुम्हारे घर आकर मैं ठहर सकती हूं। या किसी पूर्णिमा, मैं तुम्हें बुलाऊंगी तो मेरे घर रुक जाना, सुबह विदा हो जाना। लेकिन साथ हम नहीं रहेंगे। तो वह युवक कहता है कि फिर विवाह करने का कोई मतलब ही नहीं जब साथ नहीं रहना है। फिर जरूरत क्या है विवाह की ? जिस साथ रहने के लिए ही तो मैं दीवाना हूं, उसी के लिए तो सारी बात है। वह लड़की कहती है कि साथ रहने के लिए सभी दीवाने रहे और मनुष्यता

दिसम्बर १९६९ अंक : १९ वां

☆ मनुष्य के आध्यात्मिक पुनरुत्थान के लिए समर्पित ☆

अब तक नहीं समझ पाई कि साथ रहना महंगा पड़ता है—एकदम महंगा। क्योंकि इतना बड़ा हमारा हृदय ही नहीं है कि जिसके हम साथ रहें उसे हम प्रेम कर सकें। इसका बहुत गहरा कारण है। साथ जिसके हम रहें उसको प्रेम करने का बड़ा से बड़ा हृदय चाहिए। साथ जिसके हम रहें वह पुराना न पड़ जाए इसके लिए भी बड़ा आविष्कारक मन चाहिए, ताकि हम रोज जिसम नये का आविष्कार कर लें, अन्यथा 'बोर्डम' हो ही जाने वाली है। एक तो साथ जिसके हम रहें उसको भी हम परिचित न मान लें, इसकी भी बड़ी समझ चाहिए। हो नहीं जाता कोई परिचित ... चाहे मैं पचास साल एक आदमी के साथ रहूं तो भी कोई किसी से परिचित नहीं होता, लेकिन साथ रहने वाले दोनों ही मान लेंगे कि हम परिचित हो गये। और जिससे हम परिचित हो गये उसका अन्त आ गया। अपरिचय की खोज है। परिचित का अन्त आ गया, बात खत्म हो गई।

असल में निकट रहने योग्य मनुष्य अभी नहीं हैं। और प्रेम फौरन कहता है कि निकट रहो। प्रेम कहता है दूर जाओ ही मत। प्रेम कहता है सामने ही बैठे रहो। और उसे पता नहीं कि वह आत्म-हत्या कर रहा है!

कठिन है दूर जाना, लेकिन प्रेम को समझना ही चाहिए कि अभी मनुष्य इस योग्य नहीं है कि पास रह कर प्रेम कर सके—दूरी जरूरी है।

इसी संदर्भ में किरिगार्ड नामक एक अद्भुत और विश्वप्रसिद्ध विचारक की कथा है जो विश्व के दो-चार कीमती आदमियों में एक है। उसका एक लड़की से प्रेम है। वह बिलकुल पागल है उस लड़की के पीछे। लेकिन ऐन शादी के वक्त निकल भागता है घर से, और शादी से इनकार कर देता है। वह कहता है कि 'जहां तक मेरा अनुभव है जिन प्रेमियों को उनकी प्रेमिकाएं मिल जाती हैं वे दुखी हो जाते हैं। और धन्यभागी वे प्रेमी हैं जिन्हें उनकी प्रेमिकाएं नहीं मिलतीं। क्योंकि तब प्रेम जिन्दगी भर बना रह सकता है।'

किसी दिन बहुत कठिन है ऐसा आदमी पैदा करना अभी, जब हम साथ रह सकें और प्रेम कर सकें!

—महीपाल

मैं एक कुआँ खुदता देखता था, तब मुझे स्मरण आया था कि स्वभाव को भी ऐसा ही खोदना होता है। जल-स्रोत तो मौजूद थे, पर आवृत्त थे। वे बहने और फूट पड़ने को भी उत्सुक थे, पर अवरुद्ध थे। और जब अवरोध देने वाली मिट्टी की परतें दूर हो गयी थीं, तो वे कैसे स्फुरित हो उठे थे! स्वभाव के साथ ही कुछ ऐसा ही है। बहने, विकसित होने और पुष्पित होने की वहां भी चिर प्रतीक्षा है। थोड़ा-सा खोदना है और जीवन एक नये, बिलकुल नये आयाम पर गतिमय हो जाता है।

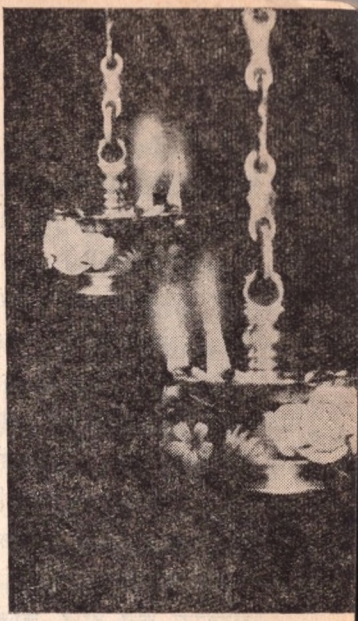

नये वर्ष के अवसर पर
बम्बई में १० नवंबर, १९६९ को
आचार्यश्री का प्रेरक उद्बोधन

एक क्षण को नया करने की
फिक्र करें अगले क्षण की
फिक्र मत करें।
नये के इस मंदिर में थोड़ा-सा भी प्रवेश
उस परमात्मा के निकट पहुंचा देता है
जो जीवन का मूल स्रोत है,
मूल धारा है !

नया वर्ष : नया संदेश

संकलन : हिम्मत जोशी

नये वर्ष के नये दिन पर पहली बात तो यह कहना चाहूंगा कि दिन तो रोज ही नया होता है, लेकिन रोज नये दिन को न देख पाने के कारण हम वर्ष में कभी कभी नये दिन को देखने की कोशिश करते हैं। अपने को धोखा देने की तरकीबों में से एक तरकीब यह भी है। दिन तो कभी भी पुराना नहीं लौटता है। रोज, हर पल और हर क्षण नया होता है, लेकिन हमने अपनी पूरी जिन्दगी को पुराना कर डाला है। उसमें नये की तलाश मन में बनी रहती है, तो वर्ष में एकाध दिन नया दिन मानकर अपनी इस तलाश को पूरा कर लेते हैं। लेकिन यह सोचने जैसा है। जिसका पूरा वर्ष पुराना होता हो उसका एक दिन नया कैसे हो सकता है? जिसकी एक वर्ष की पुरानी देखने की आदत हो, एक दिन को नया कैसे देख पायेगा? मैंने कल तक जो हर दिन को, हर सुबह को पुराना देखा हो, आज की सुबह को नया कैसे देख सकूंगा ? मैं नहीं देखने वाला हूं। जो मन हर चीज को पुराना कर लेता है, वह आज को भी पुराना कर लेता है। तब फिर नये का धोखा पैदा करने को नये कपडे हैं, उत्सव हैं, मिठाइयां हैं, गीत हैं – फिर नये का हम धोखा पैदा कर लेते

हैं। लेकिन न नये कपड़े से कुछ नया हो सकता है, न नये गीत से कुछ हो सकता है। नया मन चाहिए और नया मन जिसके पास हो उसे कोई दिन कभी पुराना नहीं होता है और जिसके पास ताजा मन हो, फ्रेश माइंड हो वह हर दिन हर चीज को ताजी और नयी देखता है। लेकिन ताजा मन हमारे पास नहीं है, तो हम चीजों को नयी करते हैं, मकान का नया रंग-रोगन करते हैं, पुरानी कार बदलकर नयी कार ले लेते हैं, पुराने कपड़े की जगह नया कपड़ा बनवा लेते हैं। हम चीजों को नया करते रहते हैं, क्योंकि नया मन हमारे पास नहीं है। नयी चीजें कितनी देर धोखा देंगी ? नया कपड़ा कितनी देर नया रहेगा ? पहनते ही पुराना हो जायगा। नयी कार कितनी देर नयी रहेगी ? पोर्च में आते ही पुरानी हो जाती है।

कभी सोचा है यह कि नये और पुराने होने के बीच में कितना फासला होता है ? जब तक जो नहीं मिला है नया होता है, मिलते ही पुराना हो जाता है। अगर नयी कार खरीदी हो कल, तो आज सोचेंगे कि और नयी कार कैसे आये और पुरानी से छुटकारा कैसे हो ? चीजों को नया करने वाली इस वृत्ति ने सब तरफ जीवन को बड़ी कठिनाई में डाल दिया है, क्योंकि कार ही नयी नहीं करनी पड़ेगी, पत्नी भी नयी लानी पड़ेगी। चीजें नयी होनीं चाहिएं न ! मकान को नया पोत कर नया कर लेने में, नयी कार खरीद लेने पर, पत्नी भी खुश हो गयी, पति भी खुश हो रहा है। लेकिन उन्हें ख्याल नहीं कि यह जो आदमी चीजों को नया करने पर लगा है, यह एक दिन पत्नी से जीवन भर राजी नहीं रह सकता, न एक पत्नी पति से जीवन भर राजी रह सकती है। क्योंकि नया होने का मतलब चीजें बदलनी हैं। तो पहले पश्चिम में मकान बदले, कारें बदलीं, फिर अब आदमी बदलने लग गये हैं। वह यहां भी होगा। नये की खोज जरूरी है मन में और होनी भी चाहिए। लेकिन दो तरह की नये की खोज होती है-या तो स्वयं को नया करने की एक खोज होती है और जो आदमी स्वयं को नया कर लेता है उसे कभी कोई चीज पुरानी होती ही नहीं। जो अपने मन को रोज नया कर लेता है उसके लिए हर चीज रोज नयी हो जाती है, क्योंकि वह आदमी रोज नया हो जाता है। और जो अपने को नया नहीं कर पाता है उसके लिए सब चीजें पुरानी ही होती हैं। थोड़ी देर धोखा दे सकता है नये से, लेकिन थोड़ी देर बाद सब चीजें पुरानी पड़ जाती हैं। दुनिया में दो ही तरह के लोग हैं, एक वे जो अपने को नया करने का राज खोज लेते हैं, और एक वे जो अपने को पुराना बनाये रखते हैं और चीजों को पुराना बनाये रखने में लगे रहते हैं– जिसको मैटीरियलिस्ट कहना चाहिए, भौतिकवादी कहना चाहिए, वह आदमी है जो चीजों को नये करने की तलाश में हो। लेकिन शायद भौतिकवादी की,

मैटीरियलिस्ट की यह परिभाषा हमारे ख्याल में नहीं आती। भौतिकवादी और अध्यात्मवादी में एक ही फर्क है– अध्यात्मवादी रोज अपने को नया करने की चिन्ता में संलग्न है, क्योंकि उसका कहना यह है कि अगर मैं नया हो गया तो मेरे लिए इस जगत में पुराना कुछ भी न रह जायगा, क्योंकि जब मैं ही नया हो गया तो पुराने का स्मरण करने वाला भी न बचा, पुराने को देखने वाला भी न बचा, हर चीज नयी हो गयी। भौतिकवादी कहता है कि चीजें नयी करो क्योंकि स्वयं को तो नये होने का कोई उपाय नहीं है। नये मकान बनाओ, नयी सड़कें लाओ, नये कारखाने, नयी सारी व्यवस्था करो–सब नया करना है। लेकिन अगर सब नया है और आदमी पुराना है, चीजों को पुराना करने की तरकीब उसके भीतर है, तो चीजों को पुराना कर ही लेगा। फिर हम इस तरह धोखे पैदा करते हैं। उत्सव हमारे दुखी चित्त के लक्षण हैं। चित्त दुखी हो, फिर भी एकाध दिन हम उत्सव मनाकर खुश हो लेते हैं। वह खुशी बिल्कुल थोपी गयी होती है, क्योंकि कोई दिन कैसे किसी को खुश कर सकता है! अगर कल आप उदास थे और मैं उदास था, तो आज दीवाली हो जाय तो मैं खुश कैसे हो जाऊंगा? हां, खुशी का भ्रम पैदा कर लेते हैं। दिये और पटाखे और फुलझड़ियां और रोशनी धोखे पैदा करेंगी कि आदमी खुश हो गया है, लेकिन ध्यान रहे, जबतक दुनिया में दुखी आदमी हैं तभी तक दीवाली है। जिस दिन दुनिया में खुश लोग रहेंगे उस दिन दीवाली जैसी चीज नहीं मनेगी, क्योंकि रोज ही दीवाली जैसा जीवन होगा। जबतक दुनिया में दुखी लोग हैं तबतक मनोरंजन के साधन हैं। जिस दिन आदमी आनंदित होगा उस दिन मनोरंजन के साधन एकदम विलीन हो जायेंगे। अपने को मनोरंजित करने वही आदमी जाता है जो दुखी है, इसलिए दुनिया जितनी दुखी होती जाती है उतने मनोरंजन के साधन हमें खोजने पड़ रहे हैं। चौबीस घंटे हमें मनोरंजन चाहिए – सुबह से लेकर रात तक, क्योंकि आदमी दुखी होता चला जा रहा है। आमतौर से हम समझते हैं कि जो आदमी मनोरंजन की तलाश करता है वह बड़ा प्रसन्न आदमी है। ऐसी भूल में मत पड़ जाना! सिर्फ दुखी आदमी मनोरंजन की खोज करता है और सिर्फ दुखी आदमी ने उत्सव ईजाद किये हैं। और सिर्फ पुराने पड़ गये चित्त ने, जिसमें धूल ही जम गयी है, नये दिन, नये साल आदि की ईजाद करके धोखा पैदा किया है। थोड़ी देर कि शीघ्र नया दिन बीतता है। कल फिर पुराना दिन शुरू हो जायेगा। लेकिन एक दिन के लिए आप जैसे कोई झटका देकर झाड़ लेना चाहते हैं सारी राख को, सारी धूल को–उससे कुछ होने वाला नहीं है। यह धोखे जुड़े हुए हैं। पुराना चित्त

नये की तलाश से जुड़ा हुआ है। चाहिए ऐसा कि रोज नया चित्त हो सके।

कैसे हो सकता है? यह थोड़ी-सी बात मैं आपसे करूं। तब नये नये साल न होंगे, नया दिन न होगा, नये आप होंगे। और तब कोई भी चीज पुरानी नहीं हो सकती। जो आदमी निरंतर नये में जीने लगे उसके जीवन की खुशी का हिसाब आप लगा सकते हैं। जिसकी पत्नी पुरानी न पड़ती हो, पति पुराना न पड़ता हो, जिसके लिए कुछ भी पुराना नहीं पड़ता हो, वही रास्ता कल जिससे गुजरा था आज गुजर के फिर भी नये फूल देख लेता हो, नये पत्ते देख लेता हो उन्हीं वृक्षों पर, उसी सूरज में नया उदय देख लेता हो, उसी सांझ में नयी बदलियां देख लेता हो। जो आदमी रोज नये को ईजाद कर सकता है भीतर से, उस आदमी की खुशी का हम कोई अन्दाजा ही नहीं लगा सकते। वैसा आदमी सिर्फ बोर नहीं होगा, बाकी सब लोग ऊब जायेंगे। पुराना उबाता है, उस ऊब से छूटने के लिए थोड़ी-बहुत तरकीब करते हैं लेकिन उससे कुछ होता नहीं है, फिर पुराना सैटिल हो जाता है। एक-दो दिन बाद फिर पुराना साल शुरू हो जायगा, फिर अगले वर्ष तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। नया दिन आयेगा, नये दिन पर हम थोड़े नये कपड़े पहनेंगे, थोड़े मुस्करायेंगे, थोड़े चारों तरफ खुशी की बात करेंगे और ऐसा लगेगा, सब नया हो रहा है। यह सब झूठा है, क्योंकि यह बहुत बार नया हुआ है और बिल्कुल नया कभी नहीं हुआ है। हर साल नया साल आता है और हर साल पुराना साल वापस लौट जाता है। इससे हमारी आकांक्षा का तो पता चलता है, लेकिन हमारी समझदारी का पता नहीं चलता। आकांक्षा तो हमारी है कि नया दिन होगा। वर्ष में एक ही हो तो भी बहुत है, लेकिन ऐसी क्या मजबूरी है? अगर एक दिन को नया करने की तरकीब का पता चल जाय तो हम हर दिन को नया क्यों नहीं कर सकते?

एक फकीर के पास कोई आदमी गया था और उससे उसने पूछा कि मैं कितनी देर के लिए शांत होने का अभ्यास करूं, तो उस फकीर ने कहा, एक क्षण के लिए शांत हो जाओ, बाकी की तुम फिक्र मत करो। उस आदमी ने कहा, एक क्षण में क्या होगा? उस फकीर ने कहा, जो एक क्षण में शांत होने की तरकीब जान लेता है वह पूरी जिन्दगी शांत रह सकता है, क्योंकि एक क्षण से ज्यादा किसी आदमी के हाथ में दो क्षण कभी होते ही नहीं। एक क्षण ही हाथ में आता है, जब आता है। और अगर एक क्षण को मैं नया कर सकूं और शांत कर सकूं और आनन्द से भर सकूं तो मेरी पूरी जिन्दगी आनंदित हो जायगी। क्योंकि एक ही क्षण मेरे हाथ में आने वाला है सदा और उसी तरकीब को मैं जानता हूं कि एक क्षण को कैसे नया कर सकूं। एक क्षण को जो नया करना जान ले उसकी पूरी जिन्दगी नयी हो जाती है।

लेकिन हम क्षण को पुराना करना जानते हैं, नया करना नहीं जानते। और जिन्दगी वैसी ही हो जाती है जैसी हम कर लेते हैं। पुराने करने की तरकीबों का हमें पता है। हम प्रत्येक चीज में पुराने को खोजने को इतने आतुर होते हैं जिसका हिसाब नहीं।

जैसा मैं अभी यहां बोल रहा हूं तो आपमें से कोई सोच सकता है कि यह गीता में लिखा है कि नहीं। यह पुराना करने की तरकीब है उसके दिमाग में। वह सोच सकता है कि फलां संन्यासी रामकृष्ण ने ऐसा कहा है कि नहीं, रमण ने कहा है कि नहीं,किसने कहा है, कृष्णमूर्ति ऐसा कहते हैं कि नहीं कहते हैं ? उसका मतलब यह है कि मैं जो कह रहा हूं उसमें वह पुराने को खोजने की तरकीब में लगा हुआ है। हम प्रत्येक चीज में पुराने को खोजते हैं और नये के लिए तड़पते हैं और खोजते पुराने को हैं, बल्कि हमारा आग्रह भी होता है कि पुराना ही रहे। अगर कल आपके पति ने या आपकी पत्नी ने शाम को आपसे प्रेम से बोला था तो आज शाम भी आप प्रतीक्षा कर रहे हैं कि वह फिर प्रेम से बोले, क्योंकि आप पुराने की तलाश कर रहे हैं। और अगर आज शाम वह आपसे प्रेम से नहीं बोला है तो उपद्रव शुरू हो जायेगा, क्योंकि कल की सांझ दोहरानी चाहिए थी। और आप चाहते हैं कि सांझ नयी हो जाय और आकांक्षा आती है कि कल की सांझ फिर दोहरे, तो हो सकता है पति झंझट में न पड़े, पत्नी झंझट में न पड़े और कल की सांझ को दोहरा दे। कल उसने जो बातें प्रेम से कही थीं आज फिर कह दे। हो सकता है कल वह इसके भीतर से निकली हो, आज सिर्फ वह दोहरा रहा हो, तब पुराने का धोखा भी पैदा हो जायगा और नये का जन्म भी न होगा और पुराना हमारे ऊपर भारी होता चला जायगा। हम निरंतर पुराने की अपेक्षा किये हुए हैं और नये की आकांक्षा भी किये हुये हैं। अगर कल जब आप मेरे पास आये थे और मैं हंसकर बोला था तो जब आज आप मेरे पास आये हैं तो अपेक्षा लेकर आये हैं कि मुझे हंसकर बोलना चाहिए। जो आदमी कल था वह गया। वह आदमी कहां है, पता नहीं। कल वह आदमी क्यों हंसा था, आज हंसेगा कि नहीं, इसका क्या पता ? लेकिन अगर वह नहीं हंसता है तो हमारे मन में पीड़ा है, क्योंकि हम कल को दोहराना चाहते हैं। हम उस आदमी को नया होने का मौका नहीं देना चाहते हैं और पुराने से ऊब भी जाते हैं। नये का मौका नहीं देना चाहते हैं तो इस कंट्राडिक्शन में जिन्दगी उलझाव और चिन्ता बन जाय तो आश्चर्य नहीं। तो मैं आपसे यह कह रहा हूं कि हम हर चीज को पुराना करने की तरकीब खोजते हैं, नये करने की कोई तरकीब नहीं खोजते। मैं आपको नये करने की

तरकीब बताना चाहता हूं और अगर आपको एक दफा यह राज़ समझ में आ जाय कि चीजों को नया कैसे करना है, तो आपकी जिन्दगी इतनी खुशियों से भर जायेगी कि अलग से खुशियों के फूल खरीदने की जरूरत न रह जायेगी, और अलग से नये कपड़े पहनकर नये होने की जरूरत न रह जायेगी, और अलग से त्यौहार और दिन और वर्ष मनाने की जरूरत न रह जायेगी। अलग से दीवालियां और होलियाँ विदा हो जानीं चाहिएं। यह सब दुखी और परेशान आदमी के लक्षण हैं। क्या तरकीब हो सकती है नये की?

पहली तो बात यह है कि प्रतिपल नये की खोज की हमारी दृष्टि होनी चाहिए कि क्या नया है? हम पूछते हैं कि क्या पुराना है? हमारे मन में प्रश्न होना चाहिए क्या नया है? और अगर हमारे मन में यह प्रश्न हो तो ऐसा कोई भी क्षण नहीं जिसमें कुछ नया न आ रहा हो। सुबह सूरज को उठकर देखें, जो सूर्योदय आज हुआ है वह कभी नहीं हुआ था। सूर्योदय रोज हुआ है, लेकिन जो आज हुआ है वह कभी नहीं हुआ था। हो सकता है आप कह दें, सूर्योदय रोज होता है, नया क्या है? लेकिन यह सूर्योदय जो आज हुआ है यह न कभी हुआ था, न कभी होगा; न ऐसे बादलों के रंग कभी पहले हुए थे, न आगे कभी होंगे, न सूरज आज की सुबह उगा है ऐसा कभी उगा था, न उग सकता है। नये को खोजें और आप चकित रह जायेंगे कि आप इस भ्रम में जी रहे थे कि रोज वही सूरज उगता था। वही सूरज रोज नहीं उगता है। न वही पत्नी रोज होती है, न वही पति रोज होता है। जो कल था वह कल विदा हो गया है। तो थोड़ा तलाश करते रहें। जो राख जम जाती है पुराने की, उसको हटाकर नीचे के अंगारे की खोज करते रहें कि नया क्या है? नये का सम्मान करना सीखें तो नया प्रकट होगा। अगर सम्मान नहीं करेंगे तो राख ही प्रकट होगी, अंगारा प्रकट नहीं होगा, अंगारा भीतर छिप जायगा। नये का सम्मान करें और जिन्दगी की यंत्रवत् पुनरुक्ति की आकांक्षा छोड़ दें। अगर कल मुझसे प्रेम मिला था तो जरूरी नहीं है कि आज भी मिले। आज को खुला छोड़ें, जो मिलेगा उसे देखें। यह आकांक्षा न करें कि जो कल मिला था वह आज भी मिलना ही चाहिए। जहां ऐसी आकांक्षा आयी कि हमने चीजों को पुराना करना शुरू कर दिया। जिन्दगी को एक थ्रिल, एक पुलक में जीने दें, एक अनिश्चय में जीने दें। क्या होगा, कहा नहीं जा सकता। आज प्रेम मिलेगा या नहीं मिलेगा कुछ भी नहीं कहा जा सकता। इस असुरक्षा को स्वीकार कर लें। लेकिन हम सुरक्षित होने की इतनी व्यवस्था करते हैं, इसलिए हमारा सारा जीवन

बासी और पुराना हो गया है। आदमी प्रेम करता ही नहीं और विवाह के लिए निवेदन पहले शुरू कर देता है। विवाह का निवेदन प्रेम को बाधा करने की तरकीब है। अगर दुनिया ठीक होगी तो प्रेम होगा, साथ रहते हुए लोग होंगे लेकिन वह विवाह नहीं होगा। विवाह जैसी बेहूदी चीज खोजने में भी नहीं आनी चाहिए। विवाह का मतलब यह कि हम पक्का, पुख्ता इन्तजाम करते हैं कि कल भी यह प्रेम जारी रहेगा। आने वाले कल में ऐसा न हो कि जिसने आज प्रेम हमें दिया था और जिसकी गोद हमें हासिल हुई थी, सिर रखने को मिली थी, कल न मिले।

नये को खोजें—नया क्या है ?

हम कल का इन्तजाम आज कर लेते हैं और कल यह गोद ऐसी ही मिलनी चाहिए। यह प्रेम वैसा ही मिलना चाहिए, फिर सब जड़ हो जायगा, सब पुराना हो जायगा, सब बासी हो जायगा, सब मर जायगा ! हमने सब तरफ ऐसा ही कर लिया है। जिन्दगी एक अनिश्चय है और आदमी डर के कारण सब निश्चित कर लेता है। निश्चित कर लेता है तो सब बासी हो जाता है। केवल वे ही लोग नये हो सकते हैं जो अनिश्चित में, 'अनसर्टेन' में, 'इन्सेक्यो-रिटी' में जीने की हिम्मत रखते हैं। वे यह कहते हैं कि जो होगा वह देखेंगे, हम कोई पक्का करके नहीं चलते हैं, हम कुछ निश्चित करके नहीं चलते हैं, हम कल के लिए कोई नियम नहीं बनाते हैं कि कल ये नियम पूरे करने ही होंगे। अगर आज के नियम कल पूरे होंगे तो कल आज की शक्ल में ढल जायेगा। लेकिन हम सब भविष्य को ढालने में चिन्तित है। हम न केवल भविष्य को, बल्कि मरने के बाद तक ढालने को चिन्तित हैं। हम इसका भी पता लगाना चाहते हैं कि मरने के बाद मैं बचूंगा कि नहीं ? मेरे नाम के सहित, मेरी उपाधि के साथ, मेरे पद के साथ मैं रहूंगा या नहीं ? पत्नी अपने पति से यह भी पूछ लेना चाहती है कि अगले जन्म में तुम मिलोगे कि नहीं ? तुम्ही मिलोगे न ? वह अगले जन्म तक को ऊब में ढालने की चेष्टा में लगी है। इस जिन्दगी को भी उसने 'बोर्डम' बना लिया है, अगली जिन्दगी को भी 'बोर्डम' बना लेना चाहती है। जिन्दगी में नये का स्वागत नहीं है हमारा, पुराने का आग्रह है, तो सब पुराना हो जायगा। तो मैं आपसे कहता हूं कि पुराने की अपेक्षा छोड़ दें तो रोज नया दिन होगा वर्ष का। नये का स्वागत करें, नये का सम्मान करें और नये को खोजें कि नया क्या है ? खोज पर बहुत कुछ निर्भर करता है कि हम क्या खोजने जाते हैं। अगर एक आदमी गुलाब के पास कांटों को खोजने जायगा

तो कांटे खोज लेगा, कांटे वहां हैं। और अगर एक आदमी फूल खोजने जायगा तो यह हो सकता है कि कांटों का उसे पता ही न चले, वह फूल खोज ले और वापस लौट आये। फूल भी वहां हैं, लेकिन हम क्या खोजने जाते हैं इस पर निर्भर करता है।

जिन्दगी में सब है, वहां राख भी है पुराने की, वहां अंगार भी है नये का। वहां चीजें मर भी रही हैं, पुरानी हो रही हैं। वहा नये का जन्म भी हो रहा है--वहां वृद्ध भी हैं, वहां बच्चे भी हैं। वहां जन्म भी है, वहां मृत्यु भी है। वहां कुछ विदा हो रहा है, कुछ आ रहा है। आप क्या खोजने गये हैं इस पर निर्भर करता है। अगर आप मृत को खोजने गये, तो आप मरघट पर पहुंच जायेंगे और तब आपको सब मुर्दे ही वहां दिखायी पड़ेंगे और सब लाशें और सब कब्रें दिखायी पड़ेंगी और तब आप उन कब्रों और लाशों और मुर्दों के बीच कैसे जिन्दा रह पायेंगे? आप मुर्दा हो जायेंगे! जहां चारों तरफ मुर्दे घिर गये हों वहां आप मर जायेंगे। लेकिन एक तरफ जीवन जन्म भी ले रहा है रोज। वहां आप खोजने नहीं गये हैं जहां सूरज की रोज नयी किरण फूटती है, कली फूटती है, रोज नया कुछ हो रहा है। क्योंकि जो पुराना हो वह नया हो कैसे सकता था, अगर नया पैदा न होता! जो आज बूढ़ा हो गया है, वह बूढ़ा इसलिए हो गया है कि कल वह बच्चा था। और जो फूल कुम्हला कर गिर गया है और बासी हो गया है, वह बासी इसलिए हो गया है कि कल वह ताजा था। अब यह आपके ऊपर निर्भर है कि आप ताजी घटना को खोजते हैं या बासी घटना को खोजते हैं। कौन आपसे कह रहा है कि गिरते फूलों को देखिये? गिरते फूलों को भी देखा जा सकता है। किंतु जिस व्यक्ति को नये से संबंध जोड़ना हो उसे उगते फूलों को देखना चाहिए, उसे कांटे गिनना छोड़ देना चाहिए। उसे नये का स्वागत और सम्मान नये की अपेक्षा में करना चाहिए, उसे अनजान और 'अननोन' की अपने भीतर प्रविष्टि और ओपनिंग के लिए खुला द्वार रखना चाहिए। तब प्रति दिन नया है, प्रति संबंध नया है, प्रत्येक मित्र नया है, पति नया है, बेटा नया है, बेटी नयी है--तब सारी जिन्दगी नयी है। तब नये के भीतर जो जीता है उसके भीतर अगर नये का फूल खिल जाता हो, तो आश्चर्य नहीं है, क्योंकि पुराने के बीच जो जीता है उसके भीतर सब सिकुड़ जाता है और मर जाता है। हम अपने चारों तरफ क्या इकट्ठा कर रहे हैं इस पर निर्भर करेगा कि हमारे भीतर क्या घटित होगा? हमारे भीतर जो घटना घटेगी वह हमारे हाथ से ही इकट्ठी की हुई है।

तो एक तो रास्ता यह है, जो चलता आया है, कि वर्ष में एक दिन नया होता है और ३६४ दिन पुराने होते हैं। और मेरा मानना है कि यह एक दिन झूठा होता है, धोखा होता है। जब ३६४ दिन पुराने होते हैं तो एक दिन नया कैसे हो सकता है? इतने पुराने की भीड़ में नया हो नहीं सकता है, सिर्फ नये का धोखा हो सकता है। मैं आपसे कह रहा हूं कि ३६५ दिन ही नये हो सकते हैं, प्रति पल नया हो सकता है—लेकिन नये ही की तैयारी और नये का सम्मान और नये के लिए मन का द्वार खुला होना चाहिए। और जो व्यक्ति एक बार नये के लिए अपने मन में द्वार खोल लेता है, आज नहीं कल पाता है कि नये के पीछे परमात्मा प्रवेश कर गया है, क्योंकि परमात्मा अगर कुछ है तो जो निरंतर नया है उसी का नाम है। लेकिन हमारे ग्रन्थ और हमारे गुरु और हमारे संन्यासी तो कहते हैं कि परमात्मा उसका नाम है जो सबसे पुराना है, वह जो सबसे पहले हुआ है, वह जो सनातन है, वह जो प्राचीन से प्राचीन है, जब कुछ भी नही था तब वह था। हमारे सब मंदिरों में मरे हुए की पूजा चल रही है, हमारी सब मस्जिदों में मरे हुए का आदर हो रहा है। हमारे सब ग्रन्थ और गुरु पुराने के सम्मान में लगे हैं। किंतु जिन्दगी रोज नयी है और जिन्दगी रोज वहां पहुंचती जाती है जहां कभी नहीं पहुंचती थी। वहां रोज नये फूल खिलते हैं, रोज नये तारे निकलते हैं, नया गीत पैदा होता है, वहां सब नया है, वहां पुराना कुछ होता ही नहीं। अगर परमात्मा भी है तो वहीं है। जो रोज नया होता है, परमात्मा वही है। जो सदा से है वह नहीं। परमात्मा वह है जो प्रतिपल होता है और प्रतिपल होता ही चला जाता है। और जीवन वही है जो निरंतर होता चला जा रहा है। जीवन एक धारा है, एक बहाव है, रोज नया होता है। अगर हम पुराने पड़ गये तो पिछड़ जाते हैं। अगर हम भी नये हुए तो हम भी जीवन के साथ बह पाते हैं। ऐसा बहकर देखें तो शायद सभी दिन नये हो जायं, सभी दिन खुशी के हो जायं और जो भी मिले उससे ही आनंद झरने लगे, क्योंकि हमारे पास वह टेकनीक, वह तरकीब, वह शिल्प, वह कला आयेगी जिससे हम हर जगह नये को खोज ही लेंगे।

मैंने सुना है, एक ऐसा विचारक, जो प्रति पल नये से नये की आशा से भरा था, प्रति पल खुशी को खोजने के लिए आतुर था और जो हर दुःख में भी, हर अंधेरी से अंधेरी बदली में भी चमकती हुई बिजली की किरणों को खोज लेता था, वह न्यूयार्क में एक सौवीं मंजिल के ऊपर रहता था। वह एक बार सौवीं मंजिल से नीचे गिर पड़ा। कहानी कहां तक सच है, मुझे पता नही, लेकिन

अगर ऐसा कोई आदमी होगा, तो सच होनी ही चाहिए। बीच में लोगों ने खिड़कियों से झांक कर उससे पूछा कि क्या हाल है? यह जानने के लिए कि यह आदमी आज इस घड़ी में भी सुख पाता है कि नहीं? उस आदमी ने चिल्लाकर कहा—कि अब तक सब ठीक है। वह जमीन की तरफ गिरा जा रहा है। उस आदमी ने हर खिड़की पर चिल्ला कर कहा—अब तक सब ठीक है, अब तक कुछ भी गड़बड़ नहीं हुई है। ऐसा आदमी आने वाली मौत को नहीं देख रहा है, गिर जाने वाली घटना को नहीं देख रहा है, अभी इस क्षण में जो है, देख रहा है। वह कह रहा है—अभी सब ठीक है।

अगर ऐसा कोई चित्त हो, तो शायद इसके लिए मौत भी फूल बन जायेगी, शायद इसके लिए मौत भी उपद्रव नहीं ला सकती जो हमें ले आती है। हम तो मरने के बहुत पहले मर जाते हैं क्योंकि बासी और पुराने हो जाते हैं। यह आदमी हो सकता है मर के भी (अगर हम इससे पूछ सकें तो) कह सके—सब ठीक है, अभी सब ठीक है। एक बार जीवन में नये का बोध शुरू हो जाय तो सब ठीक हो जाता है, और पुराने का बोध गहरा हो जाय, तो सब गलत हो जाता है।

तो मुझसे कहते हैं मेरे मित्र कि नये वर्ष के लिए कुछ कहूं। नये वर्ष के लिए मैं कुछ भी नहीं कहूंगा; क्योंकि आप तो नया वर्ष फिर जियेंगे क्योंकि आपने पिछला वर्ष पुराना कर दिया। आप नये वर्ष को भी पुराना करके ही रहेंगे। आपने न मालूम कितने वर्ष पुराने कर दिये, आप पुराना करने में इतने कुशल हैं कि नया वर्ष बच पायेगा, इसकी उम्मीद बहुत कम है। आप इसको भी पुराना कर ही देंगे और एक वर्ष बाद फिर इकट्ठे होंगे और फिर सोचेंगे नया वर्ष। ऐसा आप कितनी बार ही सोच चुके हैं, लेकिन नया आया ही नहीं; क्योंकि आपका ढंग पुराना पैदा करने का है। नये वर्ष की फिक्र न करें, नये का कैसे जन्म हो सकता है इस दिशा में थोड़ी-सी बातें सोचें और प्रयोग करें। तो तीन बातें मैंने आपसे कहीं—एक तो पुराने को मत खोजें, खोजेंगे तो वह मिल जायेगा, क्योंकि वह है। हर अंगारे में दोनों बातें हैं। वह भी है जो राख हो गया है, जो बुझ चुका हिस्सा राख हो गया है वह भी है, और वह अंगारा भी अभी भीतर है जो जल रहा है, जिंदा है, अभी बुझ नहीं गया है। अगर राख खोजेंगे, राख मिल जायेगी। जिन्दगी बहुत अद्‌भुत है। उसमें सब खोजने वाले को सब मिल जाता है। वह आदमी जो खोजने जाता है वह उसे मिल ही जाता है। वह जो आपको मिल जाता है और जो आपको मिल जाता हो, ध्यान

से समझ लेना, कि आपने खोजा था इसीलिए मिल गया है और कोई कारण नहीं है उसके मिल जाने का।

तो पहली बात—पुराने को मत खोजना। सुबह से उठकर थोड़ा प्रयोग करके देखें कि पुराने को हम न खोजें। कल जरा अपनी पत्नी को देखें जिसे तीस वर्षों से आप देख रहे थे, आप पायेंगे आपने तीस वर्ष देखे ही नहीं थे। हो सकता है, पहले दिन जब आप लाये थे तो देख लिया होगा, फिर बात समाप्त हो गयी, फिर आपने देखा नहीं। और अभी मैं आपसे कहूं कि आंख बन्द करके जरा पांच मिनट अपनी पत्नी का चित्र बनाइए मन में, तो आप अचानक पायेंगे कि चित्र डावांडोल हो जाता है, बनता नहीं। क्योंकि कभी उसकी रेखा अंकित ही नहीं हो पायी, हालांकि हम चिल्लाते रहते हैं कि इतना प्रेम करते हैं, इतना प्रेम करते हैं। वह सब चिल्लाना भी इसीलिए है कि प्रेम नहीं करते, शोर-गुल मचाकर आभास पैदा करते रहते हैं। यह आभास हम पैदा करते रहे हैं। तो कल सुबह उठकर नये की थोड़ी खोज करिये। नया सब तरफ है, रोज है, प्रति दिन है। और नये का सम्मान करिये, पुराने की अपेक्षा मत करिये। हम अपेक्षा करते हैं पुराने की, हम चाहते हैं कि जो कल हुआ था वह आज भी हो, तो फिर कल पुराना हो जायेगा। जो कभी नहीं हुआ है वह आज हो, इसकी ओर हमारा खुला मन होना चाहिए। हो सकता है वह दुःख में ले जाय, लेकिन मैं आपसे कहता हूं, पुराने सुखों से नये दुःख भी बेहतर होते हैं क्योंकि नये होते हैं। उनमें भी एक जिन्दगी और एक रस होता है। पुराना सुख भी खोखला हो जाता है, उसमें भी कोई रस नहीं रह जाता है। इसलिए कई दफा ऐसा होता है कि पुराने सुखों से घिरा आदमी नये दुःख अपने आप ईजाद करता है। यह खोज सिर्फ इसलिए है कि जब नया सुख नहीं मिलता है तो नया दुःख ही मिल जाय। आदमी शराब पी रहा है, वेश्या के घर जा रहा है, यह नये दुःख खोज रहा है। नया सुख तो मिलता नहीं तो नया दुःख ही सही। कुछ तो नया हो जाय—नये की इतनी तीव्र प्राणों की आकांक्षा है। लेकिन हम पुराने की अपेक्षा वाले लोग हैं इसलिए दूसरा सूत्र आपसे कहता हूं—पुराने की अपेक्षा न करें। कल सुबह अगर उठकर पत्नी छोड़कर जाने लगे तो एक बार भी यह मत कहें कि अरे, तूने तो वायदा किया था (कौन किसके लिए वायदा कर सकता है?) तब उसे चुपचाप घर से विदा कर आयें। जिस प्रेम से उसे ले आये थे उसी प्रेम से उसे विदा कर आयें। यह विदा भी स्वीकार कर लें। नये की सदा संभावना है। पत्नी चौबीस घंटे पूरी जिन्दगी साथ रहेगी, यह जरूरी है क्या?

रास्ते में मिलते हैं और अलग हो जाते हैं और अलग होते वक्त इतना परेशान होने की क्या बात है ? लेकिन नहीं, बड़ा मुश्किल है विदा होना, क्योंकि हम कहेंगे कि जो पुराना था उसे स्थिर रखना है, सब पुराने को स्थिर रखना है। तो नया जब आये तब उसे स्वीकार करें, पुराने की आकांक्षा न करें।

और तीसरी बात—कोई और आपके लिए नया नहीं कर सकेगा, आपको ही करना पड़ेगा। और ऐसा नहीं है कि आप पूरे दिन को नया कर लेंगे या पूरे वर्ष को नया कर लेंगे, एक एक क्षण को नया करेंगे तो अंततः पूरा दिन, पूरा वर्ष भी नया हो जायेगा। एक एक क्षण हमारे भीतर से निकला जा रहा है, जैसे रेत का दाना गिरता है रेत की घड़ी से, ऐसा एक एक क्षण हमारे हाथ से गुजर जाता है। एक क्षण को नया करने की फिक्र करें, अगले क्षण की फिक्र मत करें। अगला क्षण जब आयेगा तब उसे नया कर लेंगे और नये के इस मंदिर में थोड़ा प्रवेश उस परमात्मा के निकट पहुंचा देता है जो जीवन का मूल स्रोत है, मूल धारा है। वहां जो एक बार नहा लेता है उस मूल स्रोत में, उसके लिए इस जगत में फिर पुराना रह ही नहीं जाता। फिर कुछ भी पुराना नहीं है, फिर पुराना है ही नहीं। फिर उसके लिए बूढ़े जैसा कोई मामला ही नहीं है। वह वृद्ध ही नहीं होता, उसे वृद्धावस्था भी एक नयी अवस्था है जो जवानी के बाद आती है। तब उसके लिए मृत्यु भी एक नया जन्म है जो जन्म के बाद होता है। तब उसके लिए नये सब द्वार खुलते चले जाते हैं, सब नये के द्वार खुलते चले जाते हैं। अंतहीन नये के सब द्वार हैं लेकिन हमने सब पुराना कर डाला है। उसमें नये के झूठे स्तंभ खड़े कर रखे हैं, लीप-पोत के खड़े कर रखे हैं। ये नये दिन, ये नये वर्ष, यह सब बिल्कुल धोखा है जो हमने खड़ा किया है, लेकिन सुखद है क्योंकि वह इतने पुराने को झेलने में सहयोगी हो जाता है, तब ऐसा लगता है कि चलो, अब कुछ नया आया, अब कुछ नया होगा यद्यपि होगा कभी नहीं। अब कितने मित्र नये वर्ष पर एक दूसरे को शुभ-कामनाएं देंगे। इन मित्रों को पिछले वर्ष भी उन्होंने शुभ-कामनाएं दी थीं। फिर इन शुभ-कामनाओं को सरल मन से ग्रहण करेंगे और सरल मन से उनका प्रदान भी करेंगे—यह जानते हुए कि यह सब व्यर्थ है, इसका कोई मतलब नहीं है। तो, मैं तो शुभ-कामनाएं नहीं करूंगा नये वर्ष पर आपको, क्योंकि मैं एक ही बात कह सकता हूं कि आपको याद दिलाऊं कि आपने इतने वर्ष पुराने कर डाले। अतः नये वर्ष पर ख्याल रखना कि फिर वही न करना जो अब तक किया है। ०००

जब भीतर के चित्त की झील पर
कोई लहर नहीं होती है,
कोई आंधी नहीं होती है
तो हम दर्पण बन जाते हैं और
परमात्मा का प्रतिबिम्ब हम में
प्रतिफलित होने लगता है !

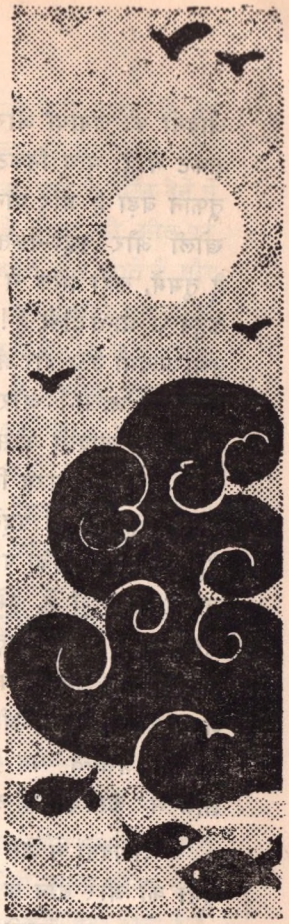

सरलता
सजगता
और
शून्यता

संकलन : श्री कस्तूरलाल गांधी

एक एक छोटी-सी कहानी से आज की चर्चा को प्रारम्भ करना चाहता हूं। सुबह सुबह एक झील के किनारे से नौका छूटी और कुछ लोग उस नौका पर सवार थे। नौका ने थोड़ा ही प्रवेश किया होगा झील में, सूरज थोड़ा ही ऊपर आया होगा कि जोर का तूफान आ गया और बादल घिर आये। नौका डगमगाने लगी। आज की नौका नहीं थी, दो हजार वर्ष पहले की थी और उसके डूबने का डर पैदा हो गया। जितने लोग उस नौका पर थे, सारे लोग घबरा गये। प्राणों का संकट खड़ा हो गया। लेकिन उस समय भी उस नौका पर एक आदमी शान्त सोया हुआ था। उन सारे लोगों ने जाकर उस

आदमी को जगाया और कहा कि क्या सो रहे हो और कैसे शान्त बने हो! प्राण संकट में हैं, मृत्यु निकट में है और नौका के बचने की कोई उम्मीद नहीं है। तूफान बड़ा है और दोनों किनारे दूर हैं। उस शान्त सोये हुए व्यक्ति ने आंखें खोलीं और कहा—कितने कम विश्वास के लोग हो तुम, कितनी कम श्रद्धा है तुममें, कहो झील से शान्त हो जाय। वे लोग हैरान हुए कि झील किसी के कहने से शान्त होती है! यह कैसे पागलपन की बात है! लेकिन वह शान्त सोया हुआ आदमी उठा और झील के पास गया और उसने जाकर झील से कहा, झील! शान्त हो जाओ! और आश्चर्यों का आश्चर्य है कि झील शान्त हो गई।

यह आदमी जीसस क्राइस्ट था और झील गैलीली झील थी और उनके साथ उनके दस-बारह मित्र थे। मैं यह देखता हूं, यह कहानी एकदम सच है। और दो हजार वर्ष पहले वह नौका नहीं डगमगाई थी। हर आदमी झील पर सवार है, हर आदमी नौका पर सवार है और कोई आदमी जब तक जीवन में है कभी जमीन पर नहीं है, हमेशा झील में है। और एक भी दिन ऐसा नहीं है जब आंधी नहीं आती है, तूफान नहीं आता है। हम रोज ही तूफान में घिरे हैं। लेकिन अगर हममें श्रद्धा हो, आत्म-श्रद्धा, और हम झील से कह सकें कि शान्त हो जाओ, तो झील निश्चित शान्त हो जाती है। कैसे हम उस झील को कहें जो अशान्त बन गई है? तूफान और आंधियों से पूर्ण उस चित्त की झील में कैसे शान्ति ला सकते हैं?

दो दिनों में उस सम्बन्ध में ६ सूत्रों की मैंने आपसे बात की। आज तीन सूत्रों की और बात करना चाहता हूं। अगर ये ९ सूत्र पूरे हो सके तो आपमें वह क्षमता आ जायगी कि आप आंख उठाकर भी देख लें झील की तरफ—तो झील शांत हो जायेगी। यह कहने की भी जरूरत न पड़ेगी कि झील शान्त हो जाओ। क्योंकि तूफान हमारा ही पैदा किया हुआ है और आंधी हमारी पैदा की हुई है और जिस अशान्ति में हम खड़े हुए हैं उसको जानने वाला कोई और नहीं, हम हैं। जिस अशान्ति को मैंने बनाया है, मैं चाहूं तो उसे इसी क्षण मिटा सकता हूं। और जिस अन्धकार को मैंने निर्मित किया है उसको मिटाने का पूरा का पूरा सामर्थ्य और शक्ति मुझमें है। मनुष्य कितना ही पाप करे और कितना ही अशान्त हो और कितना ही दुःख में हो और कितना ही पीड़ा में हो, एक सत्य स्मरण रख लेने जैसा है कि सब उसका अपना बनाया हुआ है। और इसीलिए इसी सत्य में से एक आशा की किरण भी निकल आती है कि जो खुद का बनाया हुआ हो उसे हम खुद मिटाने के हमेशा हकदार होते हैं।

तो उन तीन सूत्रों के बाबत आज मैं बात करूं, जो मेरी दृष्टि में बड़े मूल्य के हैं और जिनके बिना कोई मनुष्य कभी न शान्त हो सकता है और न सत्य को उपलब्ध हो सकता है, क्योंकि शान्ति की आंख सत्य के दर्शन देने में समर्थ बनाती हैं। जब भीतर शान्ति होती है और भीतर के चित्त की झील पर कोई लहर नहीं होती है, कोई आंधी नहीं होती, तो हम दर्पण बन जाते हैं और परमात्मा का प्रतिबिम्ब हममें प्रतिफलित होने लगता है। तब हमारी अन्तरात्मा अपनी गहराइयों में उस सत्य को प्रतिबिम्बित करने लगती है– जो चारों तरफ व्याप्त है और हमें दिखलायी नहीं पड़ता है। हम अशान्त हैं इसलिए सुन नहीं पाते उस आवाज को जो चारों तरफ मौजूद है और हम इतने व्यस्त और उलझे हुए हैं कि देख नहीं पाते उस सत्य को जो चारों तरफ खड़ा हुआ है। काश, हम अव्यस्त हो जायें, 'अन–आक्यूपाइड' हो जायं, हमारा चित्त शान्त हो जाये तो जो जानने जैसा है वह जान लिया जायगा और वह जो पाने जैसा है वह

स्वयं के चित्त के खंडों को जोड़ देना योग है; योग समाधि की उपलब्धि का द्वार है, समाधि समग्र की अनुभूति है।

पा लिया जाता है। तीन सूत्र हैं जो मैं चर्चा करूंगा–वे हैं सरलता, सजगता और शून्यता। बहुत बार सुना होगा आपने कि जीवन सरल होना चाहिए। बहुत बार सुना होगा कि जितनी सरलता हो, जितनी 'सिम्पलीसिटी' हो, उतना जीवन ऊंचा हो जाता है। लेकिन शायद ही आपको पता हो–सरलता कैसे पैदा होती है? आप सोचते हों, सादे वस्त्र पहन लेने से सरलता पैदा होती है, तो धोखे में होंगे। सादे वस्त्र पहनने से सरलता पैदा नहीं होती। बहुत जटिल लोग भी सादे वस्त्र पहने देखे जाते हैं। और अक्सर जो भीतर बहुत जटिल होते हैं वह बाहर सरलता का वेश बना लेते हैं, इसलिए नहीं कि दुनिया को धोखा दे सकें, इसलिए कि अपने को भी धोखा दे सकें। क्योंकि जो जितना जटिल होता है उतना सरल देखना चाहता है, दूसरों की आंखों में भी और अपनी आंखों में भी। इसी भांति वह अपनी जटिलता को छिपाने और जटिलता से बचने का उपाय करता है। इसलिए दुनिया में जो जटिल लोग बहुत सरल होते देखे जाते हैं, वह सरलता का अभ्यास कर लेते हैं और बाहर से सरलता ओढ़ लेते हैं। ओढ़ी हुई सरलता का कोई मूल्य नहीं है। सीधे सादे भोजन से भी कोई सरल

नहीं हो जाता है। कोई अत्यन्त विनम्रता प्रदर्शित करे उससे भी सरल नहीं हो जाता है। क्योंकि विनम्रता के पीछे अक्सर अहंकार खड़ा रहता है और विनम्र आदमी हाथ जोड़कर सिर झुकाता है तो सिर तो झुकता है, लेकिन अहंकार नहीं झुकता है । और विनम्र आदमी को भी यह भाव बना रहता है कि मुझसे ज्यादा और कोई भी विनम्र नहीं है और उसको भी आकांक्षा होती है कि मेरी विनम्रता और मेरी सरलता स्वीकृत की जाय और सम्मानित हो। सरलता को इस भांति ऊपर से तो साधना आसान है, लेकिन उसका कोई मूल्य नहीं है।

ऊपर से थोपी हुई सरलता

मैं एक गांव में गया था। एक साधु वहां रहता था, उनसे भी मिलने वहां गया। जब मैं उनके झोंपड़े पर पहुंचा तो खिड़की में से देखा वह नंगे अपने कमरे में टहल रहे हैं। मैंने दरवाजा खटखटाया। उन्होंने जल्दी से चद्दर को लपेटा और दरवाजा खोला। मैंने उनसे पूछा, आप यहां क्या करते थे? तो वह बोले, आपसे क्या छिपाऊं, मैं मुनि की दीक्षा लेना चाहता हूं तो नग्न रहने का अभ्यास कर रहा हूं। मैंने कहा : बेहतर हो, किसी सर्कस में भर्ती हो जाएं, क्योंकि नग्न रहने का अगर अभ्यास करके कोई आदमी नग्न हो गया तो वह नग्न होना बिल्कुल झूठा है। अभ्यास से जो नग्नता आयेगी उसका कोई मूल्य है? हां, सर्कस में उसका मूल्य हो सकता है, जीवन में क्या मूल्य हो सकता है! एक आदमी अभ्यास करके नग्न भी खड़ा हो जाय तो अत्यन्त सरल नहीं हो जाता, क्योंकि नग्नता भी उसकी साधी हुई है। वह भी जटिल है, वह भी कठिन है, वह भी चेष्टा से आरोपित है। एक महावीर की नग्नता रही होगी, जो आनन्द से फलित हुई थी। लोग सोचते हैं, महावीर वस्त्र छोड़कर नग्न हो गये थे। वे गलती में हैं। महावीर आनन्द को उपलब्ध करके नग्न हो गये थे। एक चित्त की दशा है कि चित्त इतना आनन्द से भर जाय, इतना आनन्द से भर जाय कि वस्त्र भी भार मालूम होने लगें। और एक अवस्था है कि चित्त इतना निर्दोष हो जाय कि शरीर पर छिपाने के लिए कुछ भी न रह जाय—इसलिए आदमी निर्वस्त्र हो जाय, यह दूसरी बात है। जो आनन्द से और निर्दोषता से, जो इनोसेंस से पैदा होती है, वह नग्नता बिल्कुल दूसरी बात है और यह जो अभिनय करके, अभ्यास करके पैदा कर ली जाती है वह बिल्कुल दूसरी बात है। एक आदमी सरल होगा, दूसरा आदमी बिल्कुल जटिल होगा। तो सरलता के सम्बन्ध में कुछ बातें स्मरणीय हैं—पहली बात यह कि सरलता थोपी हुई नहीं हो सकती है,

उसे कल्टीवेट नहीं किया जा सकता, उसे ऊपर से थोपा नहीं जा सकता। उसे भीतर से विकसित करना होता है, उसे भीतर से फैलाना होता है। अगर चारों तरफ देखें—पशु सरल हैं, पौधे सरल हैं, लेकिन मनुष्य अकेला जटिल प्राणी है।

क्राइस्ट ने एक गांव से निकलते वक्त अपने मित्रों को कहा, लिली के फूलों की तरफ देखो वह किस शान्ति से और शान से खड़े हैं; बादशाह सोलोमन भी अपनी पूरी गरिमा और गौरव में इतना सुन्दर नहीं था। लेकिन फूल कितने सरल हैं, फल सरल हैं, पौधे सरल हैं, पशु-पक्षी सरल हैं। आदमी भर जटिल है। आदमी क्यों जटिल है? इस पूरी पृथ्वी पर आदमी क्यों जटिल है, यह पूछने और विचारने जैसी बात है। आदमी इसलिए जटिल है कि आदमी जो है उसे भूलकर अपने सामने होने के आदर्श, आइडियल खड़ा कर लेता है और उनके होने के पीछे लग जाता है। उससे जटिलता पैदा होती है। जैसे आपने महावीर को देखा है, बुद्ध को देखा है, कृष्ण को, क्राइस्ट को देखा है, उनके जीवन

मनुष्य भी एक बीज है-- एक संभावना है। मनुष्य रह के ही वह पर्याप्त नहीं है। वह भी प्रभु के द्वार तक पहुँचे और अन्ततः प्रभु ही बन जाय तो ही पूर्ण हो सकता है।

को देखा है, उनके सत्य को देखा है, उनकी शान्ति को देखा है। आप सबके मन में लोभ पैदा होता है—वैसी शान्ति हो, वैसा सत्य हो, वैसा आलोक हो, वैसा जीवन हो। आप भी उन जैसे होने—चाहने में लग जाते हैं। आप भी चाहते हैं, मैं भी उन जैसा हो जाऊं। एक आदर्श खड़ा कर लेते है और फिर उस आदर्श की तरफ अपने को ढालने लगते हैं। जो आदमी किसी आदर्श को लेकर अपने को ढालना शुरू कर देता है इसलिए आदमी बहुत जटिल हो जाता है। वह इसलिए जटिल हो जाएगा कि इस संसार में दो कंकड़ भी एक जैसे नहीं होते हैं। दो पत्ते भी एक जैसे नहीं होते हैं। दो मनुष्य भी एक जैसे नहीं होते हैं। जब भी कोई आदमी किसी दूसरे आदमी को आदर्श बना लेता है और उसके जैसा होने की चेष्टा में लग जाता है तभी जटिलता शुरू हो जाती है, तभी कठिनाइयां शुरू हो जाती हैं। पूरा इतिहास इस बात का गवाह है कि दूसरा महावीर पैदा नहीं हो सकता, दूसरा बुद्ध पैदा नहीं हो सकता, दूसरा

कृष्ण पैदा नहीं हो सकता, दूसरा क्राइस्ट पैदा नहीं होता। लेकिन फिर भी, नहीं मालूम कैसा पागलपन है कि हजारों लोग सोचते हैं कि हम भी उन जैसे हो जायं! और जब आप उन जैसे होने में लग जाते हैं तो आप अपनी असलियत को दबाते हैं और दूसरे की सुनी हुई असलियत ओढ़ने लगते हैं। जब भीतर दो आदमी पैदा हो जाते हैं। तो जो आप हैं वस्तुतः वह और जो आप होना चाहते हैं कल्पना में, इन दोनों के भीतर कठिनाई, इन दोनों के भीतर तनाव, इन दोनों के भीतर अन्तर्द्वन्द्व शुरू हो जाता है। तब आप चौबीस घंटे लड़ाई में लग जाते हैं और लड़ाई मनुष्य को जटिल कर देती है। जो नहीं लड़ता वह सरल हो जाता है। जो लड़ता है वह जटिल हो जाता है। चौबीस घंटे आप लड़ रहे हैं। हर बादमी के दिमाग में शिक्षा ने, सम्प्रदायों ने और धर्मों ने, तथा–कथित उपदेशों ने यह भाव पैदा किया है कि आदर्श बनाओ। यह सबसे बड़ी झूठी बात है और सबसे खतरनाक है कि कोई आदमी किसी दूसरे आदमी को आदर्श बना ले। इसीलिए भी झूठी है कि हर आदमी केवल वही हो सकता है–जो वह है। कोई दूसरा आदमी नकल नहीं किया जा सकता और न कोई दूसरे आदमी को ओढ़ा जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति के भीतर जो उसकी निजी क्षमता है, वही विकसित हो, यह तो समझ में आता है। लेकिन एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति जैसा होने की चेष्टा में लग जाय, यह बिल्कुल समझ में आने जैसी बात नहीं है।

महावीर को हुए पच्चीस सौ वर्ष हो गये। इन पच्चीस सौ वर्षों में हजारों लोगों ने महावीर जैसा नग्न होने का प्रयास किया है। लेकिन उनमें से एक भी महावीर नहीं बन पाया। बुद्ध को हुए पच्चीस सौ वर्ष हो गये। इस बीच लाखों लोगों ने बुद्ध जैसा बनने की चेष्टा की, लेकिन एक भी आदमी बुद्ध नहीं बन पाया। क्या आंखें खोलने को यह बात काफी नहीं है कि कोई मनुष्य किसी दूसरे मनुष्य जैसा हो सकता है! और यह सौभाग्य की बात है कि कोई मनुष्य किसी दूसरे मनुष्य जैसा नहीं हो सकता है, नहीं तो दुनिया अत्यन्त घबराने वाली चीज हो जाय। हर आदमी विविध है, हर आदमी यूनिक (Unique) है, हर आदमी अद्वितीय है, हर आदमी की अपनी गौरव-गरिमा है, हर आदमी के भीतर परमात्मा का अपना वैभव है। अपनी अपनी निज की वृत्ति के भीतर बैठी हुई आत्मा है, उसकी अपनी क्षमता है, अद्वितीय क्षमता है। कोई मनुष्य न किसी दूसरे से ऊपर है, न नीचे है। न कोई साधारण है, न कोई असाधारण है। सबके भीतर एक ही परमात्मा अनेक रूपों में प्रकट हो रहा है। इसलिए बजाय

इसके कि कोई आदमी किसी दूसरे को आदर्श बनाय, यही उचित है कि उसके भीतर जो बैठा है उसे जानने में लगा रहे—बजाय इसके कि उसके बाहर जो दिखाई पड़ रहे हैं उनका अनुकरण करे। अनुकरण जटिलता पैदा करता है। किसी दूसरे का अनुकरण हमेशा जटिलता पैदा करता है। वह ऐसे ही है कि एक ढांचा हम बना लेते हैं और फिर उस ढांचे के अनुसार अपने को ढालना शुरू कर देते हैं।

आदमी कोई जड़ वस्तु नहीं है। आदमी कोई पदार्थ नहीं है कि मशीनों में ले जायें और ढाल दें। कल मैं एक कारखाना देखने गया और वहां हर चीज ढाली जा रही थी, हर चीज बनायी जा रही थी। कारखाने में एक जैसी चीजें बनायी जा सकती हैं। क्यों? क्योंकि जो हम बना रहे हैं वह पदार्थ है। लेकिन मनुष्य एक जैसा नहीं बनाया जा सकता। और जब भी मनुष्य को एक जैसा बनाने की चेष्टा की जाती है तभी दुनिया में खतरा और सबसे बड़ी बुराइयां पैदा हो जाती हैं। हम इसी कोशिश में लगे हुए हैं—सारे लोग, कि

विचार के कारण चेतना नहीं जागृत हो पाती है। विचार-प्रवाह का जो साक्षी है उसमें जागना है। साक्षी में जागना है और साक्षी को जगाना है। यही ध्यान है।

हम किसी की भांति ढल जायें एक ढांचे में, एक पैटर्न में, एक सांचे में। हम ढलकर निकल आयें, इससे बड़े दुर्भाग्य की बात और कोई नहीं होगी कि आप सांचे में ढलकर निकलें और कुछ बन जायें। क्योंकि तब आप मिट्टी होंगे, मनुष्य नहीं होंगे, और तब आप पदार्थ होंगे, परमात्मा नहीं होंगे। चेतना स्वतंत्र है। उसकी अभिव्यक्तियां हमेशा नवीन से नवीन रास्ते खोज लेती हैं और चेतना इतनी स्वतंत्र है कि हमेशा अपना मार्ग बना लेती है। उसकी खूबी किसी सांचे में ढलने में नहीं, बल्कि अत्यन्त सहज, स्फूर्त, स्वाभाविकता को उपलब्ध हो जाने में है। स्वतंत्रता को उपलब्ध करना है, किसी पराए रूप के पीछे जाकर अपने को नहीं ढाल लेना है। यह वैसा ही पागलपन है जैसे कोई कपड़े तो पहले बना ले और फिर आदमी को कहे कि अब इन कपड़ों को पहनने के लिए तुमको काट-छांट करेंगे। कपड़े तो पहले बना लिये जायें फिर हम आदमी को कहें कि अब हम तुमको काट-छांट करेंगे। क्योंकि कपड़े तो यह हैं, तुम्हें पहनने हैं और

इसलिए हम तुमको काटेंगे, छाटेंगे और तुम्हें इनके योग्य बनायेंगे। ढांचे हम पहले बना लेते हैं और फिर आदमी को काटते-छांटते हैं। और हर आदमी यह कर रहा है। हम सब ढांचे तोड़ दें और अपने भीतर बैठे हुए परमात्मा का अपमान न करें। किसी के पीछे किसी को जाने की कोई जरूरत नहीं। अपने भीतर जाने की जरूरत है। किसी के पीछे जाने से क्या प्रयोजन? और कौन किसके पीछ जा सकता है? कितनी आश्चर्य की बात है कि धार्मिक लोग यह कहते हैं, साधु और संन्यासी यह कहते सुने जाते हैं कि इस संसार में सब अकेले हैं, कोई किसी का नहीं है। वह यह कहते सुने जाते हैं कि मां-बाप नहीं हैं, भाई-बहन नहीं हैं, पति-पत्नी नहीं हैं। कोई किसी का नहीं है, सब अकेले हैं। लेकिन वही लोग यह भी समझाते हैं कि राम के पीछे चलो, बुद्ध के पीछे चलो, कृष्ण के पीछे चलो, क्राइस्ट के पीछे चलो, मुहम्मद के पीछे चलो।

जो आप हैं उसको ही जानें

जब सभी लोग अकेले हैं तो कोई किसी के पीछे कैसे चल सकता है? हर आदमी जब अकेला है तो अकेला चलेगा। किसी के पीछे कैसे चलेगा? असल में कोई किसी के साथ हो ही नहीं सकता और यह बहुत ही महत्वपूर्ण है। अगर आपके मस्तिष्क से सारे ढांचे टूट जायें और आप अपनी निज की सरलता को पकड़ने की कोशिश करें, बजाय इसके कि किसी की छाया के पीछे भागें। और छायायें भी जिन्दा नहीं हैं। कोई पच्चीस सौ वर्ष पहले विलीन हो गई हैं, कोई दो हजार वर्ष पहले, कोई तीन हजार वर्ष पहले। हम करीब करीब मुर्दा छायाओं के पीछे भाग रहे हैं और उनके जैसा बनाने की अपनी कोशिश कर रहे हैं। यह बिल्कुल निहायत पागलपन है। इससे बहुत जटिलता और कम्प्लेक्सिटी पैदा हो जाती है और इससे मनुष्य बड़ी तकलीफ में, बेचैनी में और अन्तर्द्वन्द्व में पड़ जाता है। फिर बहुत पीड़ा और बहुत परेशानी होती है। क्योंकि जो हम जानना चाहते हैं वह हम बन नहीं पाते और जो हम हैं उसकी हम फिक्र छोड़ देते हैं। फिर इस कशमकश में, इस संघर्ष में असफलता और विषाद हाथ लगते हैं और अन्त में मालूम होता है कि हम हार गये। जीवन व्यर्थ हो गया। हम तो कुछ भी नहीं बन पाये। निश्चित है अगर गुलाब के फूल चमेली के फूल बनने में लग जायें और चमेली के फूल गुलाब के फूल बनने में लग जायें, तो मुश्किल खड़ी हो जायेगी। उनके भीतर अन्तर्द्वन्द्व पैदा हो जायेगा। कृपा करें, गुलाब को गुलाब

रहने दें, चमेली को चमेली रहने दें। जो आप हैं, उसको ही जानें और वही हो जायें। और स्मरण रखें कि जो आप हैं, अपनी वास्तविक सत्ता में, उससे अन्यथा आप कभी नहीं हो सकते हैं। अगर कितनी भी चेष्टा करें तो केवल एक ऐक्टिंग, एक अभिनय भर कर पायेंगे, इससे ज्यादा कुछ नहीं। एक अभिनय मात्र ज्यादा से ज्यादा आप कर पायेंगे। और अभिनय का क्या मूल्य है? अभिनय का कोई भी मूल्य नहीं है।

सरलता का पहला सूत्र है, कृपा करके किसी का अनुगमन न करें और कोई ढांचा न बनायें। फिर क्या करें? सारे ढांचे अलग कर दें। जो महावीर के भीतर था, जो बुद्ध के भीतर था, जो राम–कृष्ण के भीतर था, वह आपके भीतर है। सब ढांचे अलग कर दें। उसे पहचानें, उसे समझें, उससे सम्बन्धित हों, उसे जगायें, उसे खड़ा करें, वह जो भीतर मूच्छित सोया हुआ मनुष्य पड़ा है उसे होश में भरें और तब आप पायेंगे कि सारी जटिलता क्षीण होने लगती है और अत्यन्त सरलता का, अत्यन्त सहजता का जन्म शुरू हो जाता है

तो एक तो यह स्मरण रखें। दूसरे यह स्मरण रखें कि जीवन में जितना कम द्वन्द्व, जितना कम संघर्ष, जितने कम व्यर्थ के तनाव, व्यर्थ के खण्ड कम हों, उतनी सरलता उत्पन्न होगी। मनुष्य जितना अखण्ड हो उतनी सरलता उपलब्ध होती है। हम खण्ड–खण्ड हैं और हम अपनी अखण्डता को अपने हाथों से तोड़े हुए हैं। हम अपनी अखण्डता को कैसे तोड़ देते हैं? हम अपनी अखण्डता को तादात्म्य से, आइडिन्टटी से तोड़ देते हैं।

होता क्या है? मैं एक घर में पैदा हुआ। उस घर के लोगों ने मुझे एक नाम दे दिया और मैंने समझ लिया कि वह नाम मैं हूं। मैंने एक आइडिन्टटी कर ली। मैंने समझ लिया कि यह नाम मैं हूं। फिर मैं कहीं शिक्षित हुआ। फिर मुझे कोई उपाधि मिल गई। फिर मैंने उन उपाधियों को समझ लिया कि ये उपाधियां मैं हूं। फिर किसी ने मुझे प्रेम किया, तो मैंने समझ लिया कि लोग मुझे प्रेम करते हैं और वह प्रेम की एक तस्वीर मैंने बना ली और समझा कि यह मैं हूं। फिर किसी ने ग्रहण किया, अपमान किया, सम्मान किया तो मैंने वह तस्वीर बना ली। ऐसी बहुत सी तस्वीरें आपके चित्त के अलबम पर आपकी ही लगती चली जाती हैं और हर तस्वीर को आप समझ लेते हैं कि मैं हूं। इन तस्वीरों में बड़ा विरोध होता है। ये तस्वीरें बहुत प्रकार की हैं। अनेक रूपों की हैं। इन तस्वीरों को, सबको, यह समझकर कि मैं हूं, आप अनेक रूपों में विभक्त हो जाते हैं।

एक और बात मुझे स्मरण आती है। एक गांव से क्राइस्ट निकले और एक आदमी ने आकर उनका पैर छुआ। और उस आदमी ने कहा—क्या मैं भी ईश्वर को पा सकता हूं ? क्राइस्ट ने पूछा कि इसके पहले कि तुम ईश्वर को पा सको, मैं तुमसे पूछूं कि तुम्हारा नाम क्या है? उस आदमी ने आंखें नीचे झुका लीं और कहा मेरा नाम? क्या बताऊं अपना नाम ? मेरे तो हजार नाम हैं । कौन सा नाम बताऊं? मैं तो हजार हजार आदमी एक ही साथ हूं। जब घृणा करता हूं तो दूसरा आदमी हो जाता हूं। जब प्रेम करता हूं तो बिल्कुल दूसरा आदमी हो जाता हूं। और जब रोष और क्रोध से भरता हूं तो बिल्कुल दूसरा आदमी हो जाता हूं। और जब क्षमा से भरता हूं तो बिल्कुल दूसरा आदमी हो जाता हूं। अपने बच्चों में मैं दूसरा आदमी हूं। अपने शत्रुओं में मैं दूसरा आदमी हूं। मित्रों में दूसरा हूं। अपरिचितों में दूसरा हूं। मेरे तो हजार नाम हैं। मैं कौन-सा नाम बताऊं?

यह हर आदमी की तस्वीर है। आपके नाम भी ऐसे ही हैं। आपके नाम भी हजार हैं। आप हजार टुकड़ों में बंटे हुए हैं। आप एक आदमी नहीं हैं। और जो एक आदमी नहीं है वह सरल कैसे होगा? उसके भीतर तो भीड़ है। हर आदमी एक क्राउड है। यह भीड़ बाहर नहीं है आपके भीतर है। तो आप में कई आदमी बैठे हुए हैं एक ही साथ । एक ही साथ कई आदमी आपके भीतर बैठे हुए हैं। ख्याल करें, अपने चेहरे को पहचानें, सुबह से उठते हैं सांझ तक आपका चेहरा एक ही रहता है? जब आप घर से बाहर निकलते हैं और रास्ते पर एक भिखमंगा भीख मांगता है तब और जब आप बाजार में पहुंचते हैं और कोई आदमी आपको नमस्कार करता है तब, और जब आप दुकान पर बैठते हैं तब, जब आप अपनी पत्नी के पास होते हैं तब, जब आप अपने बच्चों के पास होते हैं तब, क्या आपका चेहरा एक ही है? अगर आपके चेहरे अनेक हैं तो आप सरल नहीं हो सकते, जटिलता आप खड़ी कर लेंगे, बहुत जटिल हो जायेंगे। कैसे सरल हो सकते हैं, अगर एक ही आदमी के अन्दर दस पन्द्रह रहते हों?

हत्यारों ने जिन्होंने बड़ी हत्यायें की हैं, अनेकों न यह कहा है कि हमें पता नहीं कि हमने हत्या भी की है। और पहले तो लोग समझते हैं कि ये लोग झूठ बोल रहे हैं, लेकिन अब मनोविज्ञान इस नतीजे पर पहुंचा है कि ठीक कह रहे हैं। उनके व्यक्तित्व इतने खंडित हैं कि जिस आदमी ने हत्या की है वह आदमी नहीं है, जो अदालत में बयान दे रहा है। वह दूसरा आदमी है। यह

बिल्कुल दूसरा चेहरा है, उसे याद भी नहीं कि मैंने हत्या की है। इतने खण्ड हो गये हैं भीतर कि दूसरे खण्ड ने यह काम किया है, इस खण्ड को पता भी नहीं। और आपके भीतर भी ऐसे बहुत से खण्ड हैं। कई बार आपको ऐसा नहीं लगता, क्रोध करने के बाद क्या आप नहीं कहते कि मैंने अपने बावजूद क्रोध किया 'इन्सपाइट आफ माइसेल्फ।' अजीब बात है, आपके बावजूद! मतलब--आपके भीतर कोई दूसरा आदमी भी है। आप नहीं चाहते थे कि क्रोध हो और उसने क्रोध करवा दिया। कई बार आप अनुभव करते हैं कि मैं नहीं करना चाहता था, फिर मैंने किया। फिर कौन करवा देगा? जरूर आपके भीतर कोई दूसरे लोग हैं। आप नहीं चाहते हैं फिर भी आपसे हो जाता है। हजार बार निर्णय करते हैं कि अब ऐसा नहीं करेंगे, फिर भी कर लेते हैं और पछताते हैं।

प्रेम संबंध नहीं, सद्भाव है।

असल में आपके भीतर बहुत से लोग हैं। जिसने निर्णय किया था कि नहीं करेंगे और जिसने किया, उन दोनों को पता नहीं कि बीच में कोई और बात-चीत है। उन दोनों के बीच कोई सम्बन्ध नहीं है। सांझ को आप तय करके सोते हैं कि सुबह पांच बजे उठेंगे और सुबह पांच बजे आपके भीतर कोई कहता है कि रहने भी दो। आप सो जाते हैं। सुबह आप पछताते हैं कि मैंने तय किया था कि उठना है फिर मैं उठा क्यों नहीं? अगर आपने ही तय किया था कि उठना है और आप एक व्यक्ति होते, तो सुबह पांच बजे कौन कह सकता था कि मत उठो? लेकिन आपके भीतर और व्यक्ति बैठे हुए हैं और वे कहते हैं--कि रहने दो, चलने दो।

महावीर ने कहा है कि मनुष्य बहुचित्तवान है, 'पोलीसाइकिक' है। एक चित्त नहीं, आपके भीतर बहुचित्त हैं। और जिसके भीतर बहुचित्त हैं वह कभी सरल होगा? सरल हो ही नहीं सकता। उसके भीतर कई आवाजें हैं। एक आवाज कुछ कहती है, दूसरी आवाज कुछ कहती है। कभी सोचें आप, अपने भीतर आवाजों को सुनें। आपको बहुत आवाजें सुनायी पड़ेंगी। आपको लगेगा, आप बहुत आदमियों से घिरे हुए हैं। सरलता के लिए जरूरी है, एक चित्तता आ जाय, बहुचित्तता न हो। एक चित्तता कैसे आयेगी? एक चित्तता आयेगी आप जिन तादात्म्य को बना लेते हैं उनको तोड़ने से।

एक भारतीय साधु सारी दुनिया से यात्रा करके वापस लौटा था। वह भारत आया और हिमालय की एक छोटी-सी रियासत में मेहमान हुआ। उस रियासत के राजा ने साधु के पास जाकर कहा, मैं ईश्वर से मिलना चाहता हूं। मैंने बहुत से लोगों के प्रवचन सुने हैं, बहुत सी बातें सुनी हैं, सब मुझे बकवास मालूम होती हैं। मुझे नहीं मालूम होता है कि ईश्वर है और जब भी साधु-संन्यासी मेरे गांव आते हैं, तब उनके पास जाता हूं और उनसे पूछता हूं। अब मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि ईश्वर के संबंध में मुझे कोई व्याख्यान नहीं सुनने हैं, मैंने काफी सुन लिये हैं। तो आपसे यह पूछने आया हूं कि अगर ईश्वर है, तो मुझे मिला सकते हैं? वह संन्यासी बैठा चुपचाप सुन रहा था। वह संन्यासी बोला—अभी मिलना है या थोड़ी देर ठहर सकते हो? राजा एकदम अवाक् हो गया। इस उत्तर की उसको आशा नहीं थी कि कोई आदमी कहेगा कि अभी मिलना चाहते हैं कि थोड़ी देर ठहर सकते हैं। राजा ने समझा कोई समझने में भूल हो गई होगी। उस राजा ने समझा कि संन्यासी कुछ गलत समझ गया है। राजा ने दोबारा कहा—शायद आप ठीक से नहीं समझे। मैं ईश्वर की बात कर रहा हूं, परमेश्वर की। संन्यासी ने कहा—मैं तो उसके सिवाय किसी की बात ही नहीं करता। अभी मिलना है कि थोड़ी देर रुक सकते हैं? उस राजा ने भी कभी नहीं सोचा था कि वह ऐसा पूछेगा, तो क्या उत्तर दूंगा? उसने कहा—आप कहते हैं तो मैं अभी ही मिलना चाहता हूं। संन्यासी ने कहा, तो एक काम करें; यह कागज रहा, इस पर थोड़ा-सा लिख दें कि आप कौन हैं, ताकि परमात्मा तक खबर भेज दूं। क्योंकि यह तो आप मानेंगे ही कि जो आपसे भी कोई मिलने आता है, तो आप पूछ लेते हैं कौन है, क्या है? तो राजा ने कहा, यह तो ठीक है। यह तो नियमबद्ध है। उसने लिखा अपना नाम, अपना राज्य और अपने भवन का पता और वह संन्यासी को दिया। वह संन्यासी हंसने लगा और उसने कहा—दो-तीन बातें पूछनी जरूरी हो गईं। इस कागज में जो भी आपने लिखा है, सब असत्य है। तब राजा बोला—असत्य! आप क्या पागलपन की बात कर रहे हैं! मैं राजा हूं और जो नाम मैंने लिखा है वही मेरा नाम है। संन्यासी ने कहा कि मुझे तो बिल्कुल ही असत्य मालूम होता है। न आप राजा हैं और न आपने जो नाम लिखा है वह आपका है। वह राजा बोला—आप अजीब आदमी मालूम होते हैं। पहले तो आपने कहा कि ईश्वर से अभी मिला दूंगा। वह भी मुझे पागलपन की बात मालूम पड़ी। और दूसरे यह कि अब मैं कह रहा हूं कि मैं इस क्षेत्र का राजा हूं, मेरा यह नाम है तो उससे इन्कार

करते हैं। संन्यासी ने कहा—थोड़ा सोचें। अगर नाम आपका दूसरा हो तो क्या फर्क पड़ जायेगा? और आपके मा-बाप ने 'आ' नाम दे दिया और यदि मै 'बा' नाम दे देता, तो क्या फर्क पड़ जाता? आप जो थे, वही रहते कि बदल जाते? आपको अगर हम दूसरा नाम दे दें तो आप बदल जायेंगे? उस राजा ने कहा—नाम बदलने से मैं कैसे बदलूंगा। संन्यासी ने कहा—जिस नाम के बदलने से आप नहीं बदलते, निश्चित ही नाम कुछ और है, आप कुछ और हैं। आप कुछ नाम से अलग हैं और फिर आप राजा हैं, कल अगर भिखारी हो जायें इसी गांव में तो बदल जायेंगे? फिर आप आप नहीं रहेंगे? राजा बोला—मैं तो फिर भी रहूंगा। राज्य नहीं रहेगा, धन नहीं रहेगा, भवन नहीं रहेगे, भिखारी हो जाऊंगा, मेरे पास कुछ नहीं रहेगा, लेकिन मैं तो जो हूं वही रहूंगा। संन्यासी बोला—फिर राजा होने का कोई मतलब नहीं रहा। फिर वह आपके 'एक्सिजटेंस' से, आपके 'बीइंग' से, आपकी सत्ता से उसका कोई सम्बन्ध नहीं। वह तो ऊपरी खोल है, बदल जाय तो भी नहीं बदलेंगे। यह कपड़े मैं पहने हूं तो मैं यह थोड़े कहूंगा कि यह कपड़ा मैं हूं। क्यों नहीं कहूंगा? क्योंकि कपड़े दूसरे पहन लूं तब भी मैं ही बना रहूंगा। संन्यासी ने कहा—फिर राजा होने से कोई फर्क नहीं पड़ता। यह आपका परिचय नहीं हुआ, क्योंकि जो परिचय आपने दिया है उसके बदल जाने पर भी आप नहीं बदलते हैं। अतः आपका परिचय कुछ और होना चाहिए, जिसके बदलने पर आप न बदल जायें, वही आप हो सकते हैं। और जब तक आप वह परिचय न देंगे तो मैं कैसे परमात्मा को कहूं कि कौन मिलने आया है, किसको मिलाऊं? उस संन्यासी ने कहा—परमात्मा तो मौजूद है, लेकिन मिलाऊं किसको? मिलने वाला मौजूद नहीं है। क्योंकि मिलने वाला बंटा है बहुत से टुकड़ों में, खण्डों में। वह इकट्ठा नहीं है, वह राजी नहीं है, वह खड़ा नहीं है। कौन है जो मिलना चाहता है? आप ईश्वर को खोजते हैं लेकिन आप हैं, कौन हैं आप? अपने खण्डों को इकट्ठा करना होगा। कैसे वे खण्ड इकट्ठे होंगे, क्योंकि अगर सच में खण्ड हो गये हैं तो कैसे इकट्ठे होंगे? कितने ही उनको पास लायेंगे तब भी वे खण्ड बने रहेंगे। अगर सच में खण्ड हो जाय तो फिर अखण्ड नहीं हो सकते। क्योंकि खण्डों को कितने ही करीब लाओ उनके बीच फिर भी फासला बना रहेगा। वैज्ञानिक कहते हैं कि दो अंगों को कितने ही करीब लाओ, कितने ही करीब लाओ, फिर भी फासला–'डिस्टैंस' दोनों के बीच बना ही रहेगा। यह ठीक ही कहते हैं, क्योंकि कितने ही करीब लाओ, बीच में फासला होगा ही। यदि नहीं

तो दोनों एक ही हो जायेंगे अगर फासला नहीं रहेगा। तो खण्डों को कितने ही करीब लाओ अखण्ड नहीं बन सकते हैं, खण्डों का जोड़ ही होगा।

इसका अर्थ है कि अखण्ड आप हैं। खण्ड होना आपका भ्रम है। भ्रम टूट सकता है और आप इसी क्षण अखण्डता को पा सकते हैं। आप खण्डित हो नही गये हैं, खण्डित मालूम हो रहे हैं। जैसे मैं एक मकान में जाऊं। मैं एक पहाड़ पर गया था और वहाँ एक महल में लोग मुझे ले गये थे। एक बड़ी गुम्बद थी और उस गुम्बद में कांच के छोटे छोटे लाखों टुकड़े लगे थे। मैं वहां खड़ा हुआ, मुझे लाखों अपनी तस्वीरें दिखायी पड़ने लगीं, टुकड़े–टुकड़े। और फिर हमने वहां दिया जलाया तो लाख दिये जलने लगे—कांच के टुकड़े–टुकड़े में। अब अगर उस दिये को न देखूं जिसको हाथ में लिए हूं और उन कांच पर प्रतिबिम्बित हजारों दियों को देखूंगा तो मैं समझूंगा कि इस भवन में लाखों दिये जल रहे हैं और अगर मैं हाथ के दिये को देखूं तो में पाऊंगा कि एक दिया जल रहा है।

अगर में अपने को भूल जाऊंगा तो मैं देखूंगा कि हजार हजार लोग इस कमरे में मौजूद हैं और मैं अपने को देखूं तो पाऊंगा कि एक ही मौजूद है। फरक आप समझ रहे हैं – जो व्यक्ति अपने अनुभव के दर्पण में, अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी के दर्पण में, क्षण क्षण प्रवाही जीवन के दर्पण में, अपनी तस्वीर को देखता है उसे हजार हजार टुकड़े मालूम होते हैं, खुद के। और अगर वह उनको न देखे, उसको देखे जो पीछे बैठा है, सबके अनुभवों में नहीं अनुभोक्ता में, दृश्यों में नहीं द्रष्टा में, जो चारों तरफ घटित हो रहा है उसमें नहीं जिसके ऊपर घटित हो रहा है उसमें, अगर देखेंगे तो पायेंगे एक है और वहां अखण्ड है। चित्त अनेक हैं, चेतना एक है। चित्त प्रतिफलित है, चेतना एक है। जिसका प्रतिफलन है उसे पकड़ना होगा। अगर उसे पकड़ने में हम समर्थ हो जाय तो जीवन एकदम सरल हो जायेगा। अखण्ड जीवन ही सरल जीवन है। समग्र 'इन्टीग्रेटेड' जीवन ही सरल जीवन है। इसे पहचानने का रास्ता होगा। इसे पहचानने का रास्ता होगा—दूसरा सूत्र, जिसे मैं सजगता कह रहा हूं। सजगता का अर्थ है—'अवेयरनेस, होश, भान, आत्मभान। जिस व्यक्ति का आत्मभान जितना जागृत होगा वह उतना ही सरल और अखण्ड हो जाता है। आत्मभान का क्या अर्थ है? होश का क्या अर्थ है? आत्मभान का–'अवेयरनेस' का या अमूर्च्छा का, अप्रमाद का अर्थ है जीवन के जितने भी अनुभव हैं उनके साथ एक न हो जायें। उनसे दूर बने रहें, उनके द्रष्टा बने रहें। जैसे मैं इस भवन में

बैठा हूं। प्रकाश जला दिया जाय तो भवन में प्रकाश भर जायगा। प्रकाश मुझे घेर लेगा। दो भूलें मैं कर सकता हूं। यह भूल कर सकता हूं कि मैं समझ लूं कि प्रकाश हूं, क्योंकि प्रकाश कमरे में भरा हुआ है। फिर प्रकाश बुझा दिया जाय तो अन्धकार आ जायगा। फिर मैं यह भूल कर सकता हूं कि मैं अन्धकार हूं। यह भूल है, क्यों? क्योंकि प्रकाश आया तब भी मैं यहां था। प्रकाश चला गया तब भी मैं यहां था। अन्धकार आया तब भी 'मैं' यहां हूं। अन्धकार चला जाय तब भी मैं यहां रहूंगा। तो मेरा जो मैं है, वह न तो प्रकाश है, न अन्धकार है। सुख आते हैं, चले जाते हैं। दुःख आते हैं, चले जाते हैं। सम्मान मिलता है, चला जाता है। अपमान मिलता है, चला जाता है। जो आता है और चला जाता है, वह मैं नहीं हो सकता। जैसे मैं आता है और चला जाता है, वह मैं हूं।

तो जीवन के प्रत्येक अनुभव में, घृणा में, अशान्ति में, शान्ति और सुख

सुख का सूत्र एक ही है-- पैर संसार में, प्राण परमात्मा में।

में, दुःख में, मान में, सम्मान में—यह स्मरण, यह स्मृति कि जो भी घटित हो रहा है वह मैं नहीं हूं, मैं केवल उसका देखने वाला हूं—मैं देख रहा हूं कि अपमान किया जा रहा है और मैं देख रहा हूं कि सम्मान किया जा रहा है, और मैं देख रहा हूं कि दुःख आया और मैं देख रहा हूं कि सुख आया। और मैं देखता हूं कि रात हुई। और मैं देखता हूं कि दिन हुआ। सूरज उगा और सूरज डूबा। में केवल देखने वाला हूं। मैं केवल साक्षी हूं। जो हो रहा है उससे मेरा इससे ज्यादा कोई सम्बन्ध नहीं कि मैं देख रहा हूं। अगर क्रमशः यह स्मृति और यह भान विकसित होने लगे कि मैं केवल देखने वाला हूं तो धीरे धीरे आप पायेंगे आपकी अखण्डता आ रही है और खण्डता जा रही है। खण्ड होना बन्द हो जायगा। खण्ड खण्ड होते हैं, जो देखते हैं उसी के साथ एक हो जाते हैं। इसलिए द्रष्टा दृश्य के साथ एक हो जाय तो खण्ड हो जाता है जीवन। द्रष्टा दृश्य से अलग हो जाय तो अखण्ड हो जाता है जीवन। सारा योग, सारे धर्म, वे सारे मार्ग, वे सारी पद्धतियां जो मनुष्य को परमात्मा तक पहुंचाती हैं, बुनियादी रूप से इस बात पर खड़ी हैं कि मनुष्य अपनी चेतना को साक्षी समझ ले। मनुष्य केवल दर्शक मात्र रह जाये। लेकिन हम तो अजीब पागल लोग हैं। हम तो नाटक देखें या फिल्म देखें वहां भी दृश्य ही रह जाते

हैं। वहां भी हम भोक्ता हो जाते हैं। अगर नाटक में कोई दुःख का दृश्य आता है तो हमारी आंखों से आंसू बहने लगता है। हम द्रष्टा नहीं रह गये, हम भोक्ता रह गये। हम सम्मिलित हो गये नाटक में। हम नाटक के पात्र हो गये। नाटकगृह में बैठकर ऐसे बहुत कम लोग हैं जो नाटक के पात्र न हो जायं। कोई रोने लगता है, कोई हंसने लगता है, कोई दुखी और प्रसन्न हो जाता है। वह जो मंच पर हो रहा है या परदे पर हो रहा है, जहां कि विद्युत घरों के सिवाय और रोशनी के खेल के सिवाय कुछ भी नहीं है, वहां भी रोना, दुखी होना और पीड़ित होना आपके भीतर शुरू हो जाता है। आदत आपकी पड़ी है कि दृश्य के साथ एक हो जायं। धर्म कहता है कि जीवन का जो दृश्य है वहां भी एक न रह जायें और हम ऐसे पागल हैं कि नाटक के जो दृश्य होते हैं वहां भी एक हो जाते हैं। जीवन का जो बृहत्तर नाटक चल रहा है वह नाटक से ज्यादा नहीं है। क्यों हम उसे कह रहे हैं कि नाटक से ज्यादा नहीं है? इसलिए नहीं कि उसके मूल्य को कम करना चाहते हैं, बल्कि इसलिए कि उसका जो ठीक-ठीक मूल्य है वही आंकना चाहते हैं।

रात जागता हूं तो सुबह जो देखता हूं वह सच मालूम होने लगता है। और रात सोता हूं तो जो सपना होता है वह सच मालूम होने लगता है। सपने में जाते हैं तो संसार झूठा हो जाता है। सब भूल जाता हूं, कुछ याद नहीं रहता। और सपने के बाहर आते हैं, तो संसार सच हो जाता है और सपना झूठा हो जाता है। इसलिए जो जानते हैं, वह इस यात्रा में एक सपने से दूसरे सपने में आते हैं और फिर मृत्यु में सब सपना हो जाता है। अभी पीछे उलटकर देखें अपने जीवन को, तो जो जो जाना था और देखा था, क्या ठीक ठीक याद पड़ते हैं कि वह सपने में देख रहा था या सच में देख रहा था? सिवाय स्मृति के और क्या निशान रह गये हैं? पीछे लौटकर अगर कोई मत्यु के कगार पर देखे तो क्या उसे याद पड़ेगा कि जो मैंने जीवन में जाना वह सच था या सपना था। क्योंकि, निशान कहां हैं? केवल स्मृति में रह गये हैं। सपना भी स्मृति में निशान छोड़ जाता है और संसार भी। और अगर स्मृति पहचान भी जाय तो दोनों मिट जायेंगे।

एक आदमी ट्रेन से गिर पड़ा था। वह मेरा मित्र था और डाक्टर था। ट्रेन से गिरते ही उसकी स्मृति विलीन हो गई। फिर उसने पहचानना बन्द कर दिया था—कौन उसकी पत्नी है, कौन उसका पिता है? मैं उससे मिलने गया

तो वह मुझे नहीं पहचान सका। क्या हो गया ? स्मृति विलीन हो गई। उसे सपने भी भूल गये, जो उसने देखे थे पहले। और वह जिन्दगी भी भूल गई जो देखी थी; जिसकी रेखायें केवल स्मृति पर रह जाती हैं। और स्मृति के समीप पहुंचने से जिसका सब मिट जाय उसे सपने से ज्यादा क्या कहेंगे ? जो केवल स्मृति में है उसे सपने से ज्यादा और कहने का प्रयोजन क्या है ? और मौत सब स्मृति को पोंछ देती है और सब जो जाना था, जो जिया था वह सपना हो जाता है। यह जो जगत का बड़ा सपना है, इस सपने के प्रति बोध, सजगता चाहिए। यह जानना कि जो मैं देख रहा हूं, वह दृश्य है और मैं अलग हूं, मै पृथक और मैं भिन्न हूँ। इसे सुबह से शाम तक उठते–बैठते, सदा जागते, बोलते, चुप रहते, खाते-पीते, चलते-फिरते हर वक्त धीमे धीमे स्मरण को गहरा करना होगा कि मैं अलग हूं। जो हो रहा है वह अलग है। धीरे धीरे वह घड़ी आयेगी, जब आप अपने भीतर एक अलग चेतना की ज्योति को अनुभव करेंगे जो सारे

अन्धकार की परतों को उघाड़कर प्रकाश तक चलना है, पाप की परतों को उघाड़कर प्रभु तक चलना है, अज्ञान के विनाश से आत्मा को उपलब्ध करना है। साधना का यही सम्यक पथ है।

अनुभवों से अलग है, जो सारे अनुभवों से पृथक है। और तब जीवन एकदम सरल हो जायेगा। तब आप पायेंगे, एकदम आप सरल हो गये हैं, एकदम 'इनोसेंट'–जैसे छोटे बच्चे हो जायें। और छोटा बच्चा हुए बिना कोई उपलब्धि नहीं है, कोई भी उपलब्धि नहीं है। बूढ़े जब बच्चे हो जाते हैं तभी वे परमात्मा को पा लेते हैं। इतनी सरलता सजगता से उत्पन्न हो सकती है।

यह दूसरा सूत्र है सजगता और तीसरा सूत्र है शन्यता। जितना शून्य होंगे उतनी सजगता गहरी होगी। मैंने कहा सरलता उत्पन्न होती है सजगता से और सजगता उत्पन्न होती है शून्यता से। शून्यता चरम बिन्दु है। शून्यता साधना का केन्द्र बिन्दु है। शून्य हो जायें। शून्य होने का मतलब-जो भी हो रहा है चारों तरफ, उसके प्रति मरना सीखें।

एक छोटी-सी कहानी कहूं उससे शायद समझ में आ जाय। जापान में एक संन्यासी हुआ। एक ऐसा दरिद्र भिखारी, जो टोकियो राजधानी में एक नीम के

झाड़ के नीचे पड़ा रहता था। वर्ष आये और गये, वहीं पड़ा रहा। लाखों हजारों लोग उसे मानते थे और श्रद्धा देते थे। स्वयं बादशाह भी उसे श्रद्धा और आदर करता था। एक दिन बादशाह आया और उसके चरण छुए और कहा कि कृपा करें, मेरे महल में चलें। अच्छा हो कि महल में चलें। यहां पड़े रहने से क्या? बरसात भी है, वृद्ध हो गया है शरीर आपका, धूप आती है, तकलीफ होती है, सर्दी आती है। मुझपर कृपा करें और तुरंत मेरे महल में चलें। साधु ने अपनी चटाई लपेटी और खड़ा हो गया। राजा बहुत हैरान हुआ। साधु तैयार इतना जल्दी हो गया! कैसा साधु है, कैसा संन्यासी है? एक दफा भी ऐसा नहीं कहा कि यह संसार सब माया है, महल से क्या लेना-देना है। हमने तो लात मार दी। हम तो झोंपड़े में रहने वाले फकीर हैं, हम तो मग्न रहते हैं, हमको क्या मतलब? ऐसा कहता तो मालूम पड़ता कि संन्यासी है। और जिन जिन को सन्यासी मालूम पड़ना हो, उन उन को ऐसा कहना पड़ता है। वह संन्यासी तो खड़ा हो गया। उसने कहा, महाराज, चलें। वह तो आगे हो गया और बादशाह बहुत चिन्तित हुआ। संन्यासी आगे बढ़ा और बादशाह बहुत चिन्ता में था। बड़े उत्साह से लेने गया था, लेकिन चित्त एकदम फीका हो गया कि किस आदमी को ले जा रहा हूं। यह भी गलती हो गयी। यह यह तो धोखा हो गया। लेकिन जब खुद ही आमन्त्रण दिया था, खुद ही बुलाया था इसलिए इन्कार भी बीच रास्ते में कैसे करे। महल में ले गया, बड़ी अच्छी व्यवस्था उसकी की थी। जो राजा की व्यवस्था थी, वैसी व्यवस्था उसकी थी। लेकिन प्रतिक्षण संदेह बढ़ने लगा। जो जो दिया, उसने स्वीकार कर लिया और जो शाही बिस्तरे दिये उन पर सो गया। नौकर-चाकर दिये, उनकी सेवायें उसने अंगीकार कर लीं। राजा तो हैरान हुआ कि यह आदमी है कैसा? यह तो बिल्कुल ही गलत आदमी मालूम होता है। क्या यह उसकी प्रतीक्षा में ही बैठा हुआ था? क्या सब ढोंग था, धोखा था? यह सारी फकीरी क्या बरसों से प्रतीक्षा कर रही थी की राजा कब आमन्त्रण दे और मैं चलूं। रात मुश्किल से बीती। संन्यासी तो मजे से सोया, राजा नहीं सो सका। सुबह आते ही राजा ने कहा कि संतजी, बड़ी शंका मन में उठी है। जबतक निवारण न हो, मैं बड़ी दिक्कत में पड़ गया हूं। एक शंका उठी है, उसे प्रकट करने की आज्ञा दें। संन्यासी हंसने लगा। उसने कहा-तुम्हें शंका अब प्रकट हुई? मुझे वहीं हो गयी थी। जैसे ही मैं खड़ा हुआ, मैं समझा तुमने निमंत्रण वापस ले लिया। फिर तो मजबूरी से यहां तक ले आये हो। पूछ लो, शंका का निवारण कर लो। राजा ने कहा कि

रात मैं यही सोचता रहा कि आप कैसे संन्यासी हैं? संन्यासी ने कहा कि थोड़ा एकान्त होगा तो सरलता होगी बतलाने में। राजा ने कहा भेद तो जानना ही है। मुझमें और आपमें क्या भेद रहा, इस रात? कल तक तो भेद था। आप नीम के नीचे थे, भिखारी थे, भिखमंगे थे। खाने के बर्तन को सिर के नीचे रखकर सो जाते थे। मैं महल में था तो राजा था, आप भिखमंगे थे कल तक—तो बहुत भेद था। आप संन्यासी थे, मैं भोगी था। लेकिन आज रात कोई भेद मुझे दिखायी नहीं पड़ता। संन्यासी खूब हंसने लगा और कोई भी संन्यासी हंसेगा, क्योंकि अगर भेद इतना ही है कि एक के पास बहुत बिस्तर हैं और एक के पास बहुत बिस्तर नहीं हैं; एक दरख्त के नीचे सोता है और एक महलों में। अगर भेद इतना ही हो, तो संन्यास और संसार में तो भेद किस मूल्य का हुआ? कोई भेद है ही नहीं।

संन्यासी बहुत हंसा, लेकिन उसने कहा कि गांव के बाहर चलें। वे दोनों

आदर्श सिखाने की आवश्यकता नहीं है और न ही किसी को अनुसरण सिखाने की जरूरत है। व्यक्ति का निज का व्यक्तित्व पूर्णता को कैसे प्राप्त हो, इस ओर ही सारे प्रयास केन्द्रित होने चाहिये।

गांव के बाहर गये। बार-बार थोड़ी-थोड़ी दूर पर राजा पूछने लगा, उत्तर दे दें। अब तो गांव के बाहर आ गये। संन्यासी ने कहा, थोड़ा और आगे, थोड़ा और आगे। दोपहर हो गई, सूरज ऊपर आ गया तो राजा ने कहा—क्या कर रहे हैं! आप को उत्तर देना है कि नहीं? यह और आगे से क्या मतलब होगा? संन्यासी ने कहा, और आगे ही उसका उत्तर है। अब मैं आगे ही जाऊंगा, पीछे नहीं लौटूंगा। आप भी मेरे साथ चलते हैं। राजा ने कहा—मैं कैसे चल सकता हूं? पीछे मेरा महल, मेरा राज्य है। संन्यासी ने कहा—पीछे न मेरा महल है न मेरा राज्य है और इतना ही भेद है। जब रात तुम्हारे भवन में मैं सोया तो मैं बिल्कुल उतना ही शून्य था जितना जब मैं नीम के नीचे सोता था। इतना ही भेद है। उसे स्मरण रखें, इसे हृदय के किसी कोने में बैठ जाने दें। इतना ही भेद है कि जब तुम्हारे महल में सोया तो उतना ही शून्य था जितना तब

जब मैं रोज नीम के नीचे सोता था, मेरी शून्यता वही थी, वही भेद था, तुम्हारे भीतर शून्यता नहीं है। जो तुम्हारे पास आता है उसी से तुम भर जाते हो। महल से भरे हुए हो। तुम कहते हो पीछे मेरा महल है, तुम कहते हो पीछे मेरा राज्य है। तुम जब मरोगे तब भी कहोगे कि पीछे मेरा सब कुछ गया। तुम रोते हो कि कहां मुझे लिये जा रहे हैं। और मैं जब मरूंगा तो ऐसा ही चला जाऊंगा आगे, क्योंकि पीछे मेरे कुछ भी नहीं है। पीछे वही है जो भीतर हो और जो भीतर न हो वह पीछे भी नहीं है। बाहर भी वही है जो भीतर हो। जो भीतर न हो बाहर भी कुछ नहीं है। जो शून्य हो जाते हैं, उनके लिए संसार मोक्ष हो जाता है। जो शून्य हो जाते हैं उनके लिए संसार परमात्मा हो जाता है। जो शून्य हो जाते हैं उनके लिए यहीं सब कुछ उतर आता है, जिसकी आपको तलाश है और खोज है। लेकिन शून्य हो जाना जरूरी है। क्यों? क्योंकि जब वर्षा का पानी गिरता है और आकाश में मेघ इकट्ठे होते हैं और बूंदें बरसती हैं तो वह पानी की बूंदें टीलों पर या पहाड़ों पर इकट्ठी नहीं होती हैं, गड्ढों में इकट्ठी हो जाती हैं। जो टीले की भांति हैं, जिनका अहंकार उठा हुआ है उन पर पानी तो गिरेगा लेकिन बहकर नीचे निकल जायेगा, इकट्ठा नहीं होगा। और जो गड्ढों की भांति खाली और शून्य हैं उनमें भर जायगा। जो शून्य है, वह ग्रहण करता है परमात्मा को और जो भरा है संसार से वह इन्कार कर देता है, अस्वीकार कर देता है।

द्वार खोलना है तो शून्य हो जायें, भीतर से बिल्कुल खाली हो जायें। जैसे वहां कुछ न हो। सामान वहां इकट्ठा न करें, फर्नीचर अपने घर में लायें और अपने भीतर न लायें, चीजें अपने बाहर लायें लेकिन भीतर न लायें। बाहर सब होने दें लेकिन भीतर खाली रहने दें। रोज सांझ को जो इकट्ठा किया उसे बाहर कर दें। झाड़ लें अपने को, बिल्कुल साफ कर लें अपने को।

एक संन्यासी ने अपने शिष्य को एक दिन कहा कि तू बहुत दिन मेरे पास रहा है। अब मैं तुझे कहीं और भेजता हूं ताकि मैंने तुझसे जो कहा है वह और ठीक से समझ ले। तो उसको एक दूसरे संन्यासी के पास भेजा कि तू जा और उसके पास रह और उसकी जीवनचर्या को देख। वह वहां गया। सुबह से शाम तक उसने दिनचर्या को देखा। उसमें कुछ भी नहीं था। वह संन्यासी एक छोटी-सी सराय का रखवाला था। वह संन्यासी भी नहीं था। साधारण कपड़े पहनता था लेकिन उसके गुरु ने उसे वहां भेजा, तो गया। वह सुबह से शाम तक देखता रहा, वहां तो कुछ भी नहीं था। वह आदमी है,

रखवाला है, रखवाली करता है। सराय को साफ करता है। मेहमान ठहरते हैं, उनके कमरे साफ करता है। मेहमान जाते हैं, उनके कमरे साफ करता है। उसने दो-चार दिन देखा तो ऊब गया। वहां तो कोई बात ही नहीं थी, चर्या की कोई बात ही नहीं थी। चलते वक्त उसने कहा, सब देख लिया जिसके लिए मेरे गुरु ने भेजा था। सिर्फ दो बातें मैं नहीं देख पाया हूं: रात को सोते समय आप क्या करते हैं, वह मुझे पता नहीं है और सुबह उठते वक्त आप क्या करते हैं, वह मुझे पता नहीं। यह और मुझे बता दें। मैं वापस लौट जाऊं। संन्यासी ने कहा, कुछ नहीं करता। दिन भर में सराय के बरतन गन्दे हो जाते हैं तो रात को उनको साफ करके रख देता हूं और सुबह जब उठता हूं तो रात भर में उन पर थोड़ी बहुत धूल फिर जम जाती है और उन्हें मैं फिर पोंछ देता हूं। बस इससे ज्यादा कुछ नहीं करता।

शिष्य ने वापस लौटकर गुरु से कहा, कहां तुमने मुझे भेज दिया, एक साधारण सराय के रखवाले के पास! उस नासमझ से मैंने पूछा, तो न तो वह प्रार्थना करता है न ध्यान, न कुछ। वह मुझसे बोला, रात बरतन साफ कर देता हूं, दिन भर में गन्दे हो जाते हैं। और सुबह थोड़ी धूल जम जाती है तो फिर उसे पोंछ देता हूं। उसके गुरु ने कहा--कह दिया उसने। कह दिया जो कहने जैसा था, उसने कह दिया। सारा ध्यान, सारी समाधि, सब कह दिया। तू समझा नहीं। दिन भर बरतन गन्दे हो जाते हैं, सांझ को उन्हें पोंछकर साफ कर दो। रात भर में सपनों की थोड़ी धूल फिर जम जायेगी, सुबह में फिर पोंछ डालो और खाली हो जाओ। मरते जायें रोज, रोज इकट्ठे न हों, धूल को इकट्ठी न करें, रोज मर जायें, सांझ को मर जायें। जो हो गया उसके प्रति मर जायें। डाइंग टु दी पास्ट। वह जो बीत गया उसके लिए बीत जाने दें और मर जायें। उसे छोड़ दें, वह स्मृति से ज्यादा कुछ भी नहीं। उस कचरे को अलग करें। शान्त हो जायें, चुप हो जायें, शून्य हो जायें। सुबह उठें जैसे कोई शून्य उठा हो, जिसका कोई आगा-पीछा नहीं है। दिन भर ऐसे जियें जैसे सब शून्य है। बाहर सब हो रहा है, भीतर शून्य है। अगर सतत इस शून्य का भीतर स्मरण हो तो धीरे धीरे वह गड्ढा तैयार हो जाता है, जिसमें परमात्मा का अवतरण होता है और अमृत की वर्षा होती है। खाली हो जायें--परमात्मा आपको भर देगा। इसके सिवाय और कोई महत्वपूर्ण बात नहीं है। खाली हो जायं--परमात्मा आपको भर देगा। भर जायें--परमात्मा आपको खाली कर देगा।

मैंने तीन छोटे से सूत्र कहे—सरलता, सजगता और शून्यता। जो इन तीन को साथ ले, वह उस परमानन्द को उपलब्ध हो जाता है जिसकी हमने बातें सुनी हैं लेकिन जिसका हमें कोई अनुभव नहीं है। वही हम करें, जो अभी सुना है, जो अभी औरों से सुना है। जिसकी खबरें बुद्ध, महावीर, कृष्ण और राम से सुनी हैं, क्राइस्ट और मुहम्मद, मीरा और कबीर ने जिसके गीत गाये हैं। उन्होंने इसको जैसा जाना है वैसा कहा है, वैसा ही जानना आपका भी हो सके। धर्म आपका मानना न रहे, धर्म आपका जानना हो जाये। मानने का कोई मूल्य नहीं है, मानना बिल्कुल ही व्यर्थ है। जानने का मूल्य है। धर्म आपका अपना जानना, अपनी अनुभूति, अपना प्रत्यक्ष, अपना साक्षात् हो जाये, यही प्रभु से कामना करता हूं। और यदि आप तैयार हों तो कल तक रुकने की भी कोई जरूरत नहीं है। जो मिटने को तैयार है वह अभी पा लेता है। बूंद जब सागर में अपने को खोने में राजी हो जाती है, तो सागर हो जाती है। ईश्वर करे, आपकी बूंद सागर में खो जाये और आप भी उसे जान सकें जिसे जान लेना सब कुछ है, जिसे पा लेना सब कुछ है और जिसके बिना सब कुछ अभाव है, जिसे पा लेने से सब कुछ मिल जाता है—आनन्द, शान्ति, शून्य, प्रेम! ०००

सत्य के लिये हार जाना भी जीत है। क्यों कि उसके लिये हारने के साहस में आत्मा सबल होती है और उन शिखरों को छू पाती है जो कि परमात्मा के प्रकाश से आलोकित हैं।

[यात्रा–संस्मरण]

•

किशोरीरमण टण्डन

•

काश्मीर जैसा देखा था, वहां से लौटकर आने पर और भी ज्यादा सुंदर लग रहा है! जिन पहाड़ों को, जिन झरनों को, जिन झीलों को, जिस सूर्योदय और सूर्यास्त को, खेतों-उद्यानों और अगणित बहुरंगी फूलों को अलग अलग देखा था, अब लगता है जैसे सारे के सारे रंग एक दूसरे में घुलमिल कर एक नए अलौकिक इंद्रधनुषी रंग में परिवर्तित हो गए हैं। सारी भिन्नता ने अभिन्नता का रूप ले लिया है—एक मधुर स्मृति का रूप! और स्मृति यथार्थ से कहीं ज्यादा मनोहारी होती है। जो देखा था वह अतीत था—स्वप्न था। स्वप्न भी कैसा? कुछ भूला-सा, कुछ बिसरा-सा! बिखरा बिखरा-सा, फिर भी समग्रता धारण किये हुए। इसलिए काश्मीर के संस्मरण भी जैसे-जैसे खंड़ों में, टुकड़ों में स्मृति पटल पर अंकित होते जा रहे हैं उन्हें उसी रूप में चित्रित करने को जी चाहता है—क्रमबद्ध रूप में नहीं। क्रमबद्धता

में सपना जैसे टूटता–सा लगता है।

☆ ☆ ☆

कहते हैं मुगल सम्राट जहांगीर जब काश्मीर से वापस आ रहा था, रास्ते में ही सख्त बीमार हो गया। बचने की कोई उम्मीद न रही। उस दशा में जब उसकी अंतिम इच्छा पूछी गयी, तो उसके होंठों से जो निकला उसे किसी फारसी कवि ने इस प्रकार लिपिबद्ध किया है——

अज शाहे जहांगीर दमे नजा चूं जुस्तबंद
बा ख्वाहिशे दिल गुफ्त कि काश्मीर दीगर हेच

[अर्थात् : मरने के समय जब बादशाह जहांगीर से पूछा गया कि उसकी अंतिम इच्छा क्या है, तो उसने कहा कि काश्मीर के अलावा और सब हेच है।]

और अब वहां से लौटने के बाद मुझे भी ऐसा लगता है कि जैसे काश्मीर की पर्वतमालाएं, चीड़, चिनार और देवदार के वृक्ष, जल-प्रपात और सरिताएं, झील और सरोवर, उद्यान और रंग-बिरंगे पुष्प पुकार पुकार कर कह रहे हों——वापस चले आओ, वापस चले आओ, वापस चले आओ!

गया वक्त कभी वापस आया है! तब वापस जाना संभव कैसे हो? जब तक प्रिय मित्र महीपाल जैसों की मंडली, वैसा ही माहौल, वैसा ही यात्रा–उद्देश्य और सबसे बढ़कर आचार्य रजनीश का वैसा ही अपूर्व सत्संग न हो। काश्मीर की सुषमा का अपना आकर्षण निश्चित है ही, लेकिन उस सुषमा को द्विगुणित करने का श्रेय जहां आत्मीय मित्रों के साहचर्य्य को है वहां उसमें चार चांद लगा देने का श्रेय आचार्य रजनीश के सान्निध्य को है।

☆ ☆ ☆

१३–१४ साल का बशीर पूछ रहा है——"पीर साहब कब आएंगे?" शिकारे वाला ज़फर रोज़ याद दिलाता है, "हुजूर, पीर साहब सिर्फ मेरे शिकारे में बैठेंगे....किसी और के नहीं।" बूढ़ा अब्दुल्ला कह रहा है, "खुदावंद करीम, वह दिन कब दिखाएगा जब पीर साहब मेरे 'बोट' में रौनक अफरोज़ होंगे?" गुलाम टैक्सीवाला इंतजार में खड़ा है——कब पीर साहब आएं और कब उसे मौका मिले उन्हें

अपनी टक्सी में ले जाने का। सारी फिज़ां में एक अजीब निखार आ गया है आचार्यश्री के आगमन से। सब कुछ बदला बदला-सा लगता है!

☆ ☆ ☆

आचार्य रजनीश के आगमन से एक दिन पूर्व हम श्रीनगर पहुंच गए हैं। पठानकोट से श्रीनगर तक की मोटर-यात्रा भुलाई नहीं जा सकती। कहीं समतल मैदान, तो कहीं हजारों फुट ऊंची पर्वत श्रेणी के किनारे किनारे निर्मित सर्पाकार ऊर्ध्वगामी सड़क--जिसके दूसरे बाजू गहरी गहरी खाइयां। जरा-सी असावधानी...कि बस...! और मोटर चालक सरदारजी हैं कि योगी के समान एकनिष्ठ होकर ड्राइव कर रहे हैं--मजाल है कि हिचकोला भी लग जाए। नीचे कलकल करती, पत्थरों से टकरातीं, द्रुतगति से बहती कहीं झेलम, कहीं चिनाब और ऊपर लंबे-संकरे किन्तु सुदृढ़ पुल...जिन पर होकर मोटर गुजर रही है। कहीं पर्वत के ऊपर से गर्जन-तर्जन के साथ नीचे गिरता हुआ झरना--जल ऐसा ठंडा कि फ्रिज़ या बर्फ का पानी भी हेच....खतरनाक मोड़ और ढलान के स्थानों पर सड़क पर लगे हुए सूचना-पट्टों पर लिखे संकेत-वाक्य कोरे वाक्य न होकर कविता के अंश जैसे लगते हैं--लाइफ इज़ शार्ट, डोंट मेक इट शार्टर (जीवन अल्प है इसे और अल्प न बनाइए)। हरी इज़ दि काज़ आफ वरी (जल्दबाजी चिन्ता की जड़ है) आदि आदि।

श्रीनगर को राजा प्रवंश सेन द्वितीय ने ११२-१२७ ई. में बसाया था। सागर तल से ५२०० फुट की ऊंचाई पर झेलम नदी के दोनों किनारों पर बसा यह नगर अपने प्राकृतिक सौंदर्य और स्वास्थ्यवर्द्धक जलवायु के लिए विख्यात है। इसे भारत का वैनिस या स्वीट्ज़रलैंड कहा जा सकता है। प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेन्सांग ने भी

अपने भारत-यात्रा सम्बन्धी लेखों में इस नगर का विशद वर्णन किया है। फिर भी न जाने क्यों पहले दिन श्रीनगर कुछ प्रभावित न कर सका, कुछ निराशा-सी हुई देखकर--क्या यही वह स्थान है जिसकी प्रशंसा के लोगों ने पुल बांध रखे थे!

लेकिन जब सुबह सोकर उठा तो चश्मा शाही के टूरिस्ट बंगले के लान की गीली धरती से उठती सोंधी-सोंधी महक... जैसे किसी ने नशा घोलकर

रख दिया हो ! हल्का-हल्का मीठा-मीठा खुमार... साथ में बिखरी हुई रंग-बिरंगे फूलों की क्यारियां... जिनमें से पवन की हिलोरें अठखेलियां करतीं, पंखुड़ियों को झकझोरतीं मस्ती से गुजर जाती हैं और पत्तियों के कपोलों पर लटकते हुए ओस के कण नीचे अब ढलके... अब ढलके...अंत में धरती मां उन्हें अपनी कोख में समा लेती है। बस एक सड़क है जो लोहे के फाटक को आर-पार करती चली गयी है— डल झील के किनारे-किनारे। सामने पहाड़ी पर शंकराचार्य का मंदिर है और बाएं बाजू परी महल—जहां कहते हैं कभी बौद्ध विहार था। सब कुछ अच्छा लगता है— कुछ ही देर में आचार्य जी आने वाले हैं जो...

☆ ☆ ☆

रात का वक्त। गुलाबी-गुलाबी सर्दी। दूधिया-दूधिया चांदनी। पहाड़, वृक्ष, लान की क्यारियों के पौधे समाधिस्थ की तरह निश्चल... चारों ओर गहन नीरवता, गहरी स्तब्धता ! सुनाई दे रहा है, तो सिर्फ आचार्य रजनीश का स्वर :

"मैं महावीर का अनुयायी नहीं, प्रेमी ज़रूर हूं..." अनुयायी और प्रेमी का भेद अब समझ में आ रहा है। अनुयायी तो भगवान महावीर भी किसी के नहीं थे और जो उनका अनुयायी होगा वह उन्हें समझ भी कैसे सकेगा? अनुयायी तो केवल अनुगमन करने वाला होता है। विश्वास करने वाला, श्रद्धा रखने वाला... संदेह करने वाला नहीं। 'संदेह नहीं तो खोज कैसे होगी ? संदेह नहीं तो प्राण सत्य को जानने और पाने को आकुल कैसे होंगे? ध्यान रहे श्रद्धा और विश्वास बांधते हैं, संदेह मुक्त करता हैं।' संदेह किए बिना २५०० वर्ष की धूल और मलबे को हटाया कैसे जा सकेगा ? बलात् थोपी हुई आस्थाओं को नकारा कैसे जा सकेगा ? भगवान महावीर के वास्तविक स्वरूप को उजागर कैसे किया जा सकेगा ? यही सब करने के लिए ही तो काश्मीर की यात्रा का आयोजन किया गया था। और महावीर के बारे में यथातथ्य विवेचन करने वाला अधिकारी आचार्य रजनीश के अलावा और हो कौन सकता है ? इसलिए और भी कि वे 'महावीर के अनुयायी नहीं हैं'! काश्मीर में किए गये महावीर के बारे में आचार्य जी के प्रवचन जब पुस्तकाकार रूप में 'महावीर और मैं' शीर्षक से प्रकाशित होंगे, तो स्पष्ट ही वह ग्रन्थ अध्येता एमिल लुडविग या इरविंग स्टोन द्वारा लिखी गई जीवनियों के अर्थ में 'जीवन चरित' न होगा। सच सच पूछा जाय तो शायद ही इन २५०० वर्षों में भगवान महावीर की साधना, दर्शन, मान्यताओं, उपलब्धियों के बारे में आचार्य

रजनीश की तरह किसी ने सोचा होगा और शायद ही किसी ने महा वीर के बारे में अल्पज्ञात और अज्ञात तथ्यों का इतने साहस के साथ उद्-घाटन करने का प्रयत्न ही किया होगा। महावीर के व्यक्तित्व का इतना सूक्ष्म और सजीव विश्लेषण इससे पूर्व नहीं किया गया था। फलतः कितने ही तथ्य इन प्रवचनों के माध्यम से पहली बार प्रकाश में आएंगे। इतना ही नहीं कितनी ही प्रचलित धारणाएं स्वतः ही खंड-खंड हो जाएंगी और फिर जो व्यक्तित्व सामने आएगा—वह होगा महावीर का—जैसे वह थे—वैसा!

☆ ☆ ☆

आज रविवार का दिन है। सुना है श्रीनगर के उद्यानों—चश्मा शाही, निशात बाग, शालीमार, नसीम बाग, हार्वन में खूब चहल-पहल रहती है। जनता के झुंड के झुंड आते हैं इन मुगल-कालीन उद्यानों में सैर-सपाटे के लिए। सोचा था यहां वास्तविक नैसर्गिक सौंदर्य के दर्शन होंगे। बड़े अच्छे बगीचे हैं ये, मुगल बादशाहों के वैभव और ऐशो-इशरत के दर्शन कराने वाले। ठीक है...लेकिन नैसर्गिक सौन्दर्य के बजाय कृत्रिम सौन्दर्य ज्यादा नज़र आया। गुलाब की कुछ क्यारियों को छोड़कर बाकी सुगंधरहित विलायती फूलों की भरमार है। हां, फूल आकार और रंग-वैविध्य की दृष्टि से अपने ढंग के अनूठे हैं। लगता है फूलों की क्यारियां न होकर—लड़कियों ने धोकर रंग-बिरंगी साड़ियां धूप में सुखाने के लिए फैला रखी हों। यह सब होते हुए कहीं भी काश्मीर के जन-जीवन के दर्शन नहीं हुए—दिखे तो केवल शहरी फैशन-परस्त लोग—वही रंग—बिरंगी फ्राकों, कमीजों और सलवारों के मैचिंग सेट, जम्पर-ब्लाउज, क्रीम-पाउडर, लिपस्टिक—ठीक उन सुगंधरहित विलायती फूलों की तरह। मेरे ख्याल से हम हजारों मील की यात्रा करके आए थे इन बगीचों को देखने के लिए, लेकिन वहां से मील-आध मील परे खेतों और कारखानों में काम करने वाले किसान और मजदूर (जो वहां के वास्तविक सौंदर्य के प्रतीक हैं)-शायद ही कभी उन बगीचों में दिल-बहलाव के लिए आते होंगे। कैसी विडंबना है!

☆ ☆ ☆

सुबह का वक्त है। कमरे की खिड़कियों के पर्दों को हिलोरें देती शीतल मंद समीर अंदर प्रवेश करती हुई एक अजीब नशीली सुगंध से वातावरण को आप्लावित कर रही है। बाहर लान में हल्की-पीली धूप फैल रही है। आचार्यश्री के स्थान ग्रहण करने की प्रतीक्षा में चुपचाप शांत बैठे हुए हैं लोग। यह समय रात

के प्रवचन से संबंधित प्रश्न किये जाने के लिए निश्चित है। प्रश्न उठता है—महावीर के त्याग के बारे में, काय-क्लेश के बारे में और उत्तर निःसृत होता है, जिसका आशय है—

'लोग समझते हैं, महावीर ने संपत्ति छोड़ी, परिवार छोड़ा, धन छोड़ा, राज्य छोड़ा—मैं नहीं समझता। मैं तो समझता हूं—उन्होंने स्वप्न भर छोड़ा...असल में जो संपत्ति है, वह तो छोड़ी नहीं जा सकती, केवल स्वप्न ही छोड़े और तोड़े जाते हैं। जो छोड़ा वह स्वप्न था, जो पाया वह संपत्ति थी। उन्होंने सपनों को छोड़ा और सत्य को पाया..जो ज्ञानी है वह छोड़ता नहीं, पा लेता है...'

और महावीर का काय-क्लेश? 'काय-क्लेश वाले का शरीर क्या महावीर जैसा होता है—कितना सुंदर, कितना स्वस्थ, चिर यौवन से भरपूर! सौम्य चेहरे पर दिव्य तेज और परम संतोष की मुस्कराहट। परम उपलब्धि के लिए किए गए प्रयास में क्लेश कैसा? कष्ट कैसा? वह तो परम सुख है।,

और हम सब हैं जो एकटक आचार्य रजनीश के चेहरे पर नेत्र गड़ाए उनके मुख से निकली दिव्य वाणी का रसपान करते अघा नहीं रहे हैं!

☆ ☆ ☆

बड़ी अद्‌भुत है बनिहाल की दो मील लंबी 'जवाहर सुरंग'। इंजीनियरिंग की चरम उपलब्धि ही कहना चाहिए इसे। पीर पंजाल पर्वत माला की एक ऊंची श्रेणी को पार करते ही काश्मीर की सुंदर घाटी में प्रवेश करना होता है। यह श्रेणी जम्मू और काश्मीर के बीच 'एक दीवार' के समान खड़ी है। जवाहर सुरंग ९००० फुट ऊंचे बनिहाल पर्वत के बीचोंबीच सागर तल से ७३५० फुट की बुलंदी पर करोड़ों रुपये के व्यय से भारतीय तथा जर्मन इंजीनियरों द्वारा तैयार की गयी है। यह एशिया की सबसे बड़ी स्थल-सुरंग है। इस सुरंग के बन जाने के बाद से जम्मू व काश्मीर के दर्म्यानी फासले में १८ मील की कमी हो गई है और आवागमन तमाम साल चालू रहता है।

☆ ☆ ☆

रास्ते में वेरीनाग की भी सैर की। यहां का चश्मा झेलम नदी का उद्‌गम स्थान होने के कारण काफी महत्व रखता है। वेरीनाग चश्मे के चारों ओर एक अष्टकोण तालाब है। जल एकदम गहरा हरा—जगन्नाथपुरी के सागर जल की नीलिमा की याद दिलाता है। इस तालाब की गहराई किनारे पर १० फुट तथा बीच में ५४ फुट बताई जाती है, जिसमें बड़ी बड़ी मछलियों के झुंड के झुंड तैरते हुए

इसकी शोभा-वृद्धि करते हैं।

☆ ☆ ☆

आज हम लोग श्रीनगर से पहलगाम के लिए रवाना हो गये हैं। पहलगाम पहुंचकर—सहसा मुख से निकल पड़ा—

गर फिरदौस बररूए–जमीं अस्त
हमीं अस्त, हमीं अस्त, हमीं अस्त

[अर्थात् : अगर पृथ्वी पर ही स्वर्ग है, तो यहीं है, यहीं है, यहीं है!]

श्रीनगर से ६० मील दूर और समुद्रतल से ७,००० फुट की ऊंचाई पर स्थित स्वास्थ्य वर्द्धक जलवायु वाला यह स्थान प्राकृतिक सुषमा का अद्‌भुत भंडार है। जिधर निकल जाइए नैसर्गिक छटा अपने पूरे यौवन में दृश्यमान होती है। सुबह वायुसेवन के लिए जाते समय रास्ता भूल जाने के कारण जो दृश्य नजर आए—शायद कभी न देखे थे। रास्ता भूल जाने की असावधानी भी वरदान सिद्ध हुई!

यहां आकर आचार्य रजनीश भी अपने पूरे फार्म और मूड में आ गए लगते थे। महावीर के बारे में बड़ी अद्‌भुत बातें बताईं उन्होंने—केवल-ज्ञान (चरम स्थिति) को महावीर पिछले जन्म में ही प्राप्त हो चुके थे, किन्तु लोक-कल्याण के लिए अब तक जो अनकहा रह गया था उसकी अभिव्यक्ति के लिए ही वे वापस लौटे थे, दूसरा जन्म लिया था उन्होंने। बड़ा अद्‌भुत व्यक्तित्व था महावीर का...केवल मानव मात्र से नहीं, बल्कि मूक जगत तल पर पशु-पक्षी, पेड़-पौधों से भी तादात्म्य स्थापित किया था उन्होंने...उनकी अहिंसा आज की तथाकथित अहिंसा न थी, सबके प्रति एकरूपता और आत्मीयता का समभाव था...सामायिक कोई व्रत, विधि, कोई क्रिया न होकर आत्मा में स्थित होने का भाव है...महावीर न अहंकारी थे (जैसा लोगों को अक्सर भ्रम हुआ है), इसलिए न ही वे क्षमावान थे, न विनम्र। वे तो परम निरहंकारी थे और इस निरहंकारिता में होना और उसे जानना ही सबसे कठिन बात है। महावीर को न राग था, न विराग। वे तो राग–विराग से परे वीतराग की चरम स्थिति में संयोजित हो गए थे।

☆ ☆ ☆

पहलगाम से कुछ ही ऊंचाई पर बैसरन नामक स्थान है। चारों ओर पहाड़ियों से घिरा हुआ—यहां से हिमाच्छादित पर्वत-श्रृंग नजर आते हैं। घोड़ों पर जाना होता है। घोड़े भी ऐसे सधे हुए कि मुश्किल से एक फुट चौड़ी पगडंडी के सहारे–सहारे ऊपर तक ले जाते हैं। बड़ी विचित्र बात यह हुई कि आचार्यश्री ने लगभग सभी साड़ी पहनने वालियों को चुस्त पाजामा और कुरता पहनने के लिए

राजी कर लिया है—सोहन बहन, मंजु जी, मनोरमा, पुष्पा, शीलू, सुशीला, लक्ष्मी, (मंगला अभी आई नहीं है अन्यथा वह भी इनमें शामिल होती) आदि सभी इसी पोशाक में घोड़ों पर बैठ कर चढ़ाई और उतराई पार कर रही हैं—निर्भीक होकर। और छोटी बच्चियां नीतू और कल्पू भी घोड़ों पर सवारी कर रही हैं।

☆ ☆ ☆

बड़ा विचित्र संयोग घटित होता है पहलगाम में। क्षितिज के दो छोर अप्रत्याशित रूप से एक दूसरे के निकट आ गए हैं। एक तरफ आचार्य रजनीश ठहरे हुए हैं अपने प्रेमियों के साथ, दूसरी ओर महेश योगी भी डरा डाले हुए हैं अपने ४०–५० विदेशी शिष्यों के साथ। दोनों ही एक दूसरे की उपस्थिति से अनभिज्ञ हैं। एक दिन दोनों की भेंट की व्यवस्था होती है। और जब वे दोनों मिलते हैं– दोनों ही एक दूसरे के गले लगते हैं, स्नेह से ओतप्रोत एक दूसरे के हाथ को अपने हाथ में लेते हैं और दोनों ही एक दूसरे को देखकर कितने आनंदित हैं यह उन दोनों की निर्मल मुस्कान से व्यक्त हो रहा है।

महेश योगी के विदेशी शिष्य आचार्यश्री से प्रश्न कर रहे हैं परम स्थिति की उपलब्धि के लिए 'फार्मूला' या 'टेकनीक' के बारे में और आचार्य श्री का कहना है कि अपना मार्ग स्वयं बनाना होगा, कोई फार्मूला, कोई विधि यहां तक कि कोई गुरु भी लक्ष्य तक पहुंचाने में असमर्थ है। उपलब्धि तो एक स्थिति है जब विस्फोट होता है और जब कुछ नहीं करने को रह जाता है तभी यह विस्फोट का क्षण आता है। (आचार्यश्री के कहने का आशय क्या था इस बारे में विस्तृत लेख 'मैं न पथ पहचानता हूं' ज्योति शिखा के इसी अंक में पढ़िए।)

महेश योगी के कहने का आशय था 'गुरु बिन होय न ज्ञान।' गुरु के बताए 'फार्मूले' या 'टेकनीक' से ही उस परम स्थिति को प्राप्त किया जा सकता है।

और जब दोनों विदा हुए, यद्यपि दोनों एक मत नहीं थे, फिर भी उतने ही स्नेह, उतनी ही आत्मीयता, उतनी ही सहृदयता से विदा हुए—जिस भाव से वे मिले थे।

दो व्यक्तित्वों का यह मिलन अद्भुत मिलन था—इसे महावीर और बुद्ध के मिलन की संज्ञा दी जा सकती है—जब वे एक ही धर्मशाला में ठहरे थे, फिर भी दोनों में आपस में कोई वार्तालाप न हुआ था; क्योंकि कहने सुनने को था ही क्या! और शायद आचार्य रजनीश और महेश योगी भी एक दूसरे से मिलकर भी मौन रहते यदि कुछ जिज्ञासु विदेशी शिष्यों ने

चित्र बोलते हैं

आचार्यश्री की काश्मीर-यात्रा के दर्म्यान पहलगाम में लिये गये चित्रों की झांकी

काश्मीर में कश्मीरी

सबके प्रश्न : एक का उत्तर
(महेश योगी के विदेशी शिष्यों के बीच आचार्यश्री)

दो छोर मिले, पर दूरी उतनी ही बनी रही
(आचार्यश्री और महेश योगी की अविस्मरणीय भेंट)

कोई हो भेष लेकिन शाने सुल्तानी नहीं जाती!

प्रश्न न पूछे होते। दो महान् संतों का यह अभूतपूर्व मिलन सदा-सदा के लिए लगता है हृदय-पटल पर अंकित होकर रह गया है...

☆ ☆ ☆

आज एक बड़ी मजेदार चर्चा छिड़ गई है। प्रवचन के दौरान उन लोगों का जिक्र आया जो आत्म-पीड़न—जैसे खुद को कोड़े लगाना, सुइयां चुभोना, कांटों या कीलों की शैय्या पर सोना आदि को साधना का अंग मानते हैं। इस पर प्रश्न छिड़ गया कि महान साहित्यकार दे सादे (DE SADE) का तमाम साहित्य ऐसी ही विकृतियों से भरा पड़ा है। और एक अमरीकी विशेषज्ञ ने एक शोधग्रन्थ प्रकाशित किया है जो 'किन्से रिपोर्ट' के नाम से विख्यात है। इसमें डा. किन्से ने ऐसे जघन्य कार्यों को काम-विकृति की संज्ञा दी है। आचार्य जी का कहना था कि ऐसी विकृतियां, जो आध्यात्मिक साधना के नाम पर की जाएं या कामवासना की तृप्ति के लिए—दोनों में कोई अंतर नहीं है। बल्कि धर्म के नाम पर की गयीं ऐसी विकृतियां ज्यादा खतरनाक और घृणित हैं।

☆ ☆ ☆

प्रवचन और प्रश्नोत्तर के दर्म्यान सारा वातावरण गंभीर ही रहता हो, सो बात नहीं है। बीच बीच में मुल्ला नसरुद्दीन या किसी ऐसे ही व्यक्ति से संबंधित कोई लघु-कथा या प्रसंग आ जाता है और हंसी का ठहाका गूंज उठता है।

एक सज्जन प्रश्न कर रहे हैं आचार्य श्री से कि खटमल और मच्छर बड़ा दुःख देते हैं, उन्हें मारने के बारे में आपका क्या ख्याल है? आचार्य जी मुस्करा कर उत्तर देते हैं—"अजीब बात है, उन्हें न मारने के लिए कहता हूं तो नींद हराम होने पर आप मुझे गालियां देंगे। मारने के लिए कहता हूं तो आप सारा पाप मेरे सिर मढ़ देंगे।" इस पर हंसी का एक विस्फोट मानो गिरि-श्रृंगों से प्रतिध्वनित होता हुआ मैदानों में छितर कर पूरी डल झील पर बिखर-सा गया!

☆ ☆ ☆

गुलमर्ग जाकर निराशा ही हाथ लगी। जो कुछ पढ़ा-सुना था, उसके बारे में सब अतिशयोक्ति जैसा लगा। श्रीनगर से २५ मील रोड से तंगमर्ग तक जाना होता है। वहां से गुलमर्ग के लिए तीन मील की चढ़ाई है। रास्ता रमणीक जरूर है, लेकिन वहां पहुंचकर घुड़दौड़, पोलो तथा गोल्फ के सूने मैदान के अलावा कुछ भी देखने को नहीं मिला। हो सकता है हम भारतीयों की तुलना में विदेशियों को यह स्थान इसलिए ज्यादा आकर्षक लगता हो कि बर्फ पड़ने के दिनों

में यहां स्केटिंग आदि का आनंद लिया जा सकता है।

☆ ☆ ☆

हम गुलमर्ग से लौट आए हैं। आज अंतिम दिन है—विदा का दिन। कभी न कभी तो यह क्षण आना ही था! हम सबकी आंखें सजल-सजल हैं, मन भरे-भरे, गले रुंधे-रुंधे से, चेहरे उदास-उदास। बहुत कुछ कहना चाहते हैं, कह नही पा रहे हैं! इससे पहले बहुत कुछ कहा जा चुका है फिर भी ऐसा लगता है अब भी बहुत कुछ अनकहा रह गया है! आचार्य रजनीश मे सब विदा ले रहे हैं और अनेक अनेक भावों में डूबते-उतरा रहे हैं। और आचार्य रजनीश हैं कि केवल एक ही भाव से—अविरल बहते हुए प्रेम भाव से उसी प्रकार सबको विदा दे रहे हैं, जिस प्रकार आगमन के समय उन्होंने प्रेम से सबको गले लगाया था!

☆ ☆ ☆

और काश्मीर से लौट आने के बाद लग रहा है जैसे आचार्यश्री के मुख से निःसृत वाणी सहस्रों बुद्ध, महावीर, ला-ओत्से, गुरजेफ़, कन्फ्यूशियस की वाणी का रूप धारण कर निरंतर ध्वनित-प्रतिध्वनित हो रही है!

क्या काश्मीर में जो कुछ देखा-सुना था—सब सपना था? नहीं, वह सब सत्य था, यथार्थ था। हां, अब वह सब सपने के समान ज़रूर लग रहा है—मधुर सपने जैसा... मोहक सपने जैसा! किंतु कितना सजग!...कितना सजीव! ●

'पराग' सम्पादकीय विभाग,
टाइम्स आफ इण्डिया, बम्बई- १

☆

अतीत अब सिवाय स्मृति के और कहीं भी नहीं है। हमारे सारे सिद्धान्त, सारी धारणायें, सारे आदर्श अतीत से ही लिये हुए हैं।

☆

आचार्यश्री से पहलगाम (काश्मीर) में महेश योगी के विदेशी शिष्यों द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तर के संदर्भ में :

मैं न पथ पहचानता हूं....

संकलन : श्री माणिक बाफना

बहुत सी बातें समझने में मुश्किल पड़ती है। पहली बात तो यह समझने में मुश्किल पड़ती है कि कहीं जाना नहीं है। हमारे चित्त की पूरी व्यवस्था ऐसी है कि वह कहता है कि कहीं चलो जहां कुछ भी नहीं है। पूरा चित्त ही इस तनाव से बना है कि कहीं चलो—वहां जहां कहीं दूर मंजिल है। चित्त का आधार यही है कि मंजिल दूर हो, नहीं तो चित्त गया। क्योंकि मंजिल दूर हो, तो पाने की कोशिश करनी पड़ती है, सोचना पड़ता है। और मंजिल दूर हो, तो आज तो मिल नहीं जाती—कल मिलेगी, इसलिए आज उस कल के प्रति तनाव जारी रखना पड़ता है। मन जीवित रहता है तनाव में। यह तनाव गहरे में

कहीं पहुंचने का तनाव है—चाहे वह धन हो, चाहे यश, चाहे मोक्ष । मन उस वक्त मर जाता है जिस वक्त आपने कहा—कहीं नहीं जाना है, जाना ही नहीं है कहीं, तो मन के अस्तित्व की सारी आधारशिला हट जाती है। जब तक आप कहीं जाने में लगे हैं तब तक एक बात पक्की है कि अपने को जानने में ही लग सकते हैं; क्योंकि दूर ले जाने वाला मन पास नहीं आने देता। और यह दूर ले जाने वाला मन इतना कुशल है कि फिर अगर दूर भी आप चले जायें तो यह कहता है कि पास आने के लिए भी कोई रास्ता चाहिए। जैसे एक आदमी यहां रात में सोया और उसने सपने में देखा कि वह कलकत्ते चला गया, तो उसे किसी रास्ते से लौट आना पड़ेगा कलकत्ते से यहां। वस्तुतः वह गया ही नहीं है! क्योंकि सच बात यह है कि जहां हम हैं वहां से वस्तुतः जा ही कैसे सकते हैं? जो हम हैं उससे अन्यथा हम हो कैसे सकते हैं? हम वहीं हैं, सिर्फ हमारा मन चला गया है, सिर्फ कामना चली गयी है। मन भी क्या जायेगा – कामना चली गयी है, 'डिजायर' चली गयी है दूर। हम वहीं खड़े हैं। सवाल कुल इतना है कि जहां हम खड़े हैं वहीं हम अपनी सारी 'डिजायर' को, सारे विचार को, सारी कामना को वहीं रोक लें जहां हम खड़े हैं, तो जो हम हैं वह हमें पता चल जायगा। एक तो यह समझ में नहीं आता साधारणतया, क्योंकि जीवन का सारा अनुभव यह कहता है कि मंजिल दूर है। आत्मिक अनुभव की बात बिल्कुल उल्टी है—कि मंज़िल दूर बिल्कुल नहीं है, बिल्कुल ही पास है। तो जो मंजिल दूर है उसको जोड़ने के लिए रास्ता चाहिए, विधि चाहिए, मेथड चाहिए, टेकनीक चाहिए और समय चाहिए। फिर गुरु चाहिए, फिर बताने वाला चाहिए, क्योंकि मंजिल आगे है। भविष्य अंधकारपूर्ण है। हम वहां गये नहीं हैं, तो कोई चाहिए। भविष्य में मंजिल है तो गुरु अनिवार्य है, शास्त्र अनिवार्य हैं—गाइड होगा, व्यवस्था होगी, विधि होगी, टेकनीक होगी। लेकिन मजे की बात है कि मंजिल यहीं मौजूद है, अभी इसी वक्त। कहीं जाना नहीं है खोजने, सिर्फ ठहर जाना है। और ठहर वह जायेगा जो खोज बन्द कर दे, क्योंकि खोजने वाला मन ठहर कैसे सकता है? वह खोज रहा है, निरंतर खोज रहा है। नहीं खोज रहे हैं आप, नान-सीकिंग की एक हालत है। कुछ भी नहीं खोज रहे हैं, बस हैं। तो इस क्षण में होगा क्या? इस क्षण में आप कहीं भी गये होंगे, तो चेतना वहीं होगी जहां है और जहां उद्घाटन होगा।

सभी विधियां इस बात को मानकर चलती हैं कि आप कहीं चले गये हैं या कहीं आपको जाना है।

तो विधि मात्र की जो भूल है वह हमारे जाने वाले मन में लगी हुई है और जब विधि सीखेंगे तो फिर गुरु चाहिए। फिर सब आयेगा पीछे से—सारी गुरुडम आयेगी, आश्रम आयेगा, संप्रदाय आयेगा, अनुयायी आयेंगे—वह सब आयेंगे। दूसरी मजे की बात है जो ख्याल में नहीं आती और वह यह है कि अगर किसी क्षण में कोई व्यक्ति कुछ भी नहीं खोज रहा हो तो भी तो कहीं होगा, होगा तो कहीं। न खोजता हो, न करता हो, न सोचता हो तो भी कहीं होगा। अपने को अन्यथा होने के सब दरवाजे बन्द हैं। न तो वह कुछ कर रहा है कि उलझ जाय, न वह कुछ सोच रहा है जिसमें फंस जाय, न वह कुछ खोज रहा है जिसमें वह चला जाय। न खोज रहा है, न सोच रहा है, न कर रहा है। नान-डूइंग, नान-सीकिंग, नान-थिंकिंग। होगा कहां, जायेगा कहां? मर तो नहीं जायेगा। होगा कहीं वह, फिर वहीं होगा जहां है। कोई उपाय नहीं रहा उसका। बाहर जाने के दरवाजे गये। ये सब दरवाजे बाहर ले जाने वाले हैं, क्योंकि किसी

जगत की स्थितियाँ दर्पण हैं, जिसमें हम अनेक कोणों में, अनेक रूपों में अपने ही दर्शन कर लेते हैं।

भी स्थिति में जिस स्थिति में होगा वह उसका स्वभाव होगा, उसका स्वरूप होगा—उसका उद्घाटन करना है और स्वरूप के उद्घाटन के लिए सब मैथड बाधाएं हैं और सब रास्ते बाधाएं हैं, क्योंकि वे दूर ले जाते हैं, कहीं खोजने ले जाते हैं। यह एकदम से ख्याल में आना अति कठिन मालूम होता है। एक बार ख्याल में आ जाय तो इससे ज्यादा सरल कुछ भी नहीं है। लेकिन हमारा जो माइंड है उसकी पूरी की पूरी व्यवस्था इसी भाषा में सोचने की है कि कहीं जाना है, कैसे भी जाना है। और जब कोई रास्ता बताता है तब हमारी समझ में आता है कि बात ठीक कही जा रही है, रास्ता होगा।

एक सज्जन ने बहुत बढ़िया बात कही है। उन्होंने कहा कि चाहे विधि से और चाहे अविधि से, मेथड से चाहे नो मैथड से, पहुंचना हमको वहीं है, पाना हमको वही है। अब इसे अगर गौर से देखेंगे तो मजेदार है यह वाक्य। इसका मतलब क्या होता है? अब अगर आप यह कहते हैं कि चाहे विधि से और चाहे अविधि से, मंजिल तो एक ही है, तो फिर आप विधि खोज ही लेंगे। विधि से आप नहीं बच सकते, क्योंकि विधि वहीं है मंजिल के

साथ। फिर आप अविधि की बात ही नहीं सोच सकते। चूंकि मैं यह कह रहा हूं इसलिए वह कह सकते हैं कि जो मैंने कहा वही उन्होंने कहा। मैं नहीं कह सकता यह कि जो मैंने कहा वही उन्होंने कहा। वह तो बिल्कुल ही उल्टा है, जो उन्होंने कहा है। मैं नहीं कह सकता यह बात क्योंकि मैं बात ही और कह रहा हूं। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि मैथड से कोई पहुंच जाता है और कोई नो मैथड से पहुंच जाता है। मैं यह कह रहा हूं कि मैथड वाला पहुंच ही नहीं सकता, क्योंकि मैथड हमेशा भविष्य की तरफ इंगित करता है, मंजिल की तरफ। नो मैथड अपनी तरफ इंगित करता है क्योंकि नो मैथड में मंजिल का कोई उपाय नहीं है। जाइएगा कहां? रास्ता नहीं है कोई। रास्ता तो कहीं ले जाता है, वह हमेशा कहीं ले जाता है। और यहां कठिनाई यह हो गयी है, आत्मिक जीवन की कि यहां कहीं जाना नहीं है। जहां हम हैं वहीं एक क्षण को हो जाना है। तो किसी भी रास्ते से हम गये, तो हम भटके। तो इधर लोग कहते हैं कि रास्ता पहुंचाता है और मैं कहता हूं कि रास्ता मात्र भटकाता है। और सब मामलों में बिल्कुल ठीक है यह बात कि अगर आपको स्टेशन जाना है, तो रास्ते से जायेंगे। एक मामले में यह बात गलत है। अगर अपने पर आना है तो रास्ते साथ नहीं आ पायेंगे, क्योंकि रास्ते पर चलना ही दूर निकलने की शुरुआत हो गयी है। तब सवाल है करें क्या? तो मेरा कहना यह है कि हम इस स्थिति को समझें ठीक से ताकि यह पूरी सिचुएशन हमारी समझ में आ जाय कि ऐसा उलझाव है कि अगर रास्ता पकड़े तो भटक गये।

असल में मजा यह है कि रास्ता मात्र बाहर जाने का होता है, क्योंकि अन्दर तो हम हैं। ऐसा तो है नहीं कि हम बाहर गये हैं और अंदर आना है। अगर इसको हम ठीक से समझें तो ऐसा तो हो नहीं गया है कि हम बाहर हैं और हमें अन्दर आना है। हम तो अंदर हैं ही, इसमें कोई उपाय ही नहीं है बाहर होने का। इसमें अगर कोई उपाय भी होता तो फिर उल्टा उपाय भी होता। यानी ऐसा न करके बाहर हो सकते हैं! मुझे बताइए आप बाहर हो कैसे सकते हैं? आप जहां भी रहेंगे भीतर ही होंगे। बाहर जाने का तो कोई उपाय नहीं है, लेकिन बाहर की कल्पना भर हो सकती है। आप जो यहां बैठे हैं तब कलकत्ता नहीं जा सकते, लेकिन कलकत्ता जाने का सपना देख सकते हैं, इसमें कोई कठिनाई नहीं। आंख बन्द करके आप कलकत्ता जा सकते हैं—इस अर्थ में कि विचार चला जाय, आप लेकिन फिर भी यहीं होंगे। आप होंगे यहीं, आप होंगे अपने भीतर ही। इसलिए भीतर जाने का सवाल नहीं है। हम बाहर

किन किन रास्तों से चले गये हैं उन रास्तों को छोड़ देने का सवाल है असल में। अगर मैं इसी कमरे में बैठा हुआ हूं, तो मुझे इसी कमरे में आना नहीं है। सवाल सिर्फ यह है कि मुझे यह कमरा मिट गया है। मुझे कलकत्ता दिखायी पड़ रहा है। तो मैं विचार की किसी यात्रा से कलकत्ता पहुंच गया हूं। हूं मैं उसी कमरे में, लेकिन एक अर्थ में कलकत्ते में हूँ। यह कमरा मुझे दिखायी ही नहीं पड़ रहा है। कलकत्ते के स्टेशन पर खड़ा हुआ हूं, वह स्टेशन ही दिखायी पड़ रहा है। तो हमारे सामने सवाल है कि मैं अपने घर कैसे वापस लौट जाऊं? अगर सच ही मैं कलकत्ता पहुंच गया होता, तो कोई ट्रेन दिखायी पड़ती, कोई कार पकड़नी पड़ती, वह रास्ता पकड़ना पड़ता। अगर सच ही कलकत्ता पहुंच गया होता तो फिर इस कमरे तक आने के लिए कोई रास्ता पकड़ना ही होता। लेकिन चूंकि मैं सच में पहुंचा ही नहीं, सिर्फ ड्रीम कर रहा हूं, इसलिए आने के लिए कोई रास्ता नहीं है और अगर मैंने रास्ता पकड़ा तो वह और भटकाने वाला होगा। क्योंकि स्वप्न में पकड़े हुए रास्ते का क्या मतलब हो सकता है? सिर्फ सवाल इतना है कि मैं इस तथ्य के प्रति जाग जाऊं कि मैं तो भीतर हूं ही, सिर्फ मेरा विचार बाहर चला गया है और मैं कभी अपने भीतर के बाहर नहीं गया, तो फिर अब सवाल क्या है? सवाल यह रह गया है कि विचार न जाय और विचार चला क्यों गया? मैंने भेजा है इसलिए चला गया है और मैंने भेजा इसलिए है कि कलकत्ता में कुछ मिलने को है जो यहां नहीं मिल रहा है, इसलिए चला गया है। कोई आकांक्षा है जो वहां तृप्त होती है, यहां तृप्त नहीं होती इसलिए चला गया है। विचार चला गया है वासना के वाहन पर बैठकर और हम वहीं हैं, यानी यह आंधारभूत सत्य ख्याल में आ जाना चाहिए कि हम वहीं हैं, वासना के वाहन पर बैठकर विचार चला गया है। समझ लीजिये एक आदमी यहां बैठा है और कलकत्ते में विचार है। वह कहता है कि मैं कैसे घर लौटूं? तो उसको हम कहेंगे कि तुम हवाई जहाज पकड़ो और लौट जाओ। वह कहां जायेगा, कहां का हवाई जहाज पकड़ेगा? जितना कलकत्ता झूठ है उतना ही झूठ कलकत्ते में हवाई जहाज का होना है। कलकत्ता में वह है ही नहीं आदमी। तब जितना झूठा हवाई जहाज होगा उतनी ही झूठी टिकट होगी, उतना ही झूठा हवाई जहाज का पाइलट होगा, उतना ही हवाई जहाज को पहुंचाने वाला गाइड होगा। चूंकि कलकत्ता में होना बुनियादी रूप से झूठ है इसलिए अब कलकत्ते में जो भी किया जायेगा वह सच हो ही नहीं सकता, वह झूठ ही होगा और झूठ लौटाने वाला नहीं होता है। यह सवाल सिर्फ इतना है कि हमें

यह जानना है कि हमें आना नहीं है अपने भीतर। आते तो जब, हम बाहर चले गये होते। हम भीतर हैं, गये हम हैं नहीं, सिर्फ विचार हमारा बाहर चला गया है। विचार न जाय तो हम फौरन पायेंगे कि हम भीतर हैं। सिर्फ आप दिवा स्वप्न में खो गये थे। हमने थोड़ा हिला दिया, तो आप कलकत्ता में थोड़े ही जागेंगे। आप जागेंगे यहां, और कलकत्ता से लौटने के लिए कोई वाहन काम में नहीं आयेगा, कोई जरूरत नहीं वाहन की।

यह जो बुनियादी सत्य है कि हम कभी अपने से बाहर गये ही नहीं हैं, हम जिसके बाहर जा सकते हैं वह हमारा स्वरूप नहीं हो सकता। जो हमारा बुनियादी स्वरूप है उससे हम बाहर जा कैसे सकते हैं, लेकिन हम गये हुए मालूम पड़ते हैं। एक तो भूल यह हो गयी कि हम गये हुए मालूम पड़ते हैं। अब दूसरा झूठ यह पालना है कि हम लौटें कैसे। मैथड, रिलीजन, पूजा, रिच्युअल यह सब हम इसलिए पकड़ते हैं कि लौटने के रास्ते हम पकड़ सकें। बड़े मजे की बात है कि जिस आदमी का जाना ही भूल भरा है, उसके लौटने की क्या बात है! उस आदमी को सिर्फ इतनी बात के प्रति सजग करना जरूरी है कि तुम कहीं गये ही नहीं हो। अनंत काल से तुम वहीं हो लेकिन अनंतकाल से तुम्हारा चित्त भटक रहा है, कल्पना भटक रही है, भीड़ में तुम खो रहे हो। तो कृपा करो, थोड़ी देर के लिए भीड़ में मत रहो, थोड़ी देर के लिए सोचो मत, थोड़ी देर के लिए वहीं हो जाओ जहां हो ; तो तुम पा लोगे जो पाया ही हुआ है। इसलिए सवाल मैथड का नहीं है, नो मैथड का है क्योंकि मैथड ले जाने वाला है, रास्ता ले जाने वाला है इसलिए 'पाथ' का सवाल नहीं है 'नो पाथ' का सवाल है। गुरु कहीं पहुंचाने वाला है, हमें कहीं पहुंचना नहीं है हम वहीं हैं। कौन गुरु हमें पहुंचा सकता है? फिर गुरु की कोई जरूरत नहीं है। इसमें गुरु का कोई सवाल नहीं है। गुरु तो उसी ड्रीमलैंड का हिस्सा है जिस में हम भटकने को सच मानते हैं, फिर हम ले जाने वाले को सच मानते हैं, फिर उसके चरणों को छूते हैं, फिर उसको गुरु मानते हैं। और वह जो हमको ले जा रहा है वह कहां ले जायेगा? क्योंकि हम कलकत्ते में हैं नहीं। मेरी जो सारी बात है वह कुल इतनी है कि बीम (विचार किरण) हमारी वहीं है जहां हम नहीं हैं—ऐसा चित्त में और हमारे बीच में फासला पड़ गया है। यह फासला बिल्कुल काल्पनिक है। यह वास्तविक डिस्टैंस अगर होता तो बिल्कुल ही रास्ते की जरूरतें पड़ जातीं। लेकिन फासला बिल्कुल झूठा है। इस फासले को मिटाने के लिए कुछ और करने की जरूरत नहीं है। यह जो चित्त के जाने की आदत है इसको

समझने की जरूरत है कि जाता क्यों है बाहर? जाता है इसलिए कि वहां कुछ मिल जायेगा। फिर एक गुरु आता है और कहता है कि मोक्ष पाना है, तो वह एक नयी डिज़ायर पैदा करवा रहा है। वह कह रहा है कि मोक्ष वहां है। संसार की चीज तो यहीं मिल जायेगी जमीन पर, वह मोक्ष तो यहां जमीन पर भी नहीं है। सिद्धशिला बहुत दूर है उसकी। वहां मोक्ष है, वह तो हमें पाना है, वहां शांति है, वहां आनन्द है, वहां परम अमृत बरस रहा है। आपका लोभ जगा, ग्रीड जगी। अपने भीतर लोभ जगा कि ऐसी शांति मुझे भी चाहिए, ऐसा आनन्द मुझे भी चाहिए। यह मोक्ष मुझे भी चाहिए। और मोक्ष बिल्कुल अंधेरे की बात है इसलिए इसमें सब तरह के गुरु चल सकते हैं।

अब यह जो मोक्ष की आपकी आकांक्षा जग गयी और शांति चाहिए, आनंद चाहिए, सौन्दर्य चाहिए, यह लोभ जग गया। अब आप चले और लंबी यात्रा पर निकले। इस जमीन की यात्रा तो फिर भी वास्तविक है। यह एक ऐसी यात्रा पर आप जा रहे हैं जहां बिल्कुल अंधा खेल है, जहां गुरु कहता है– ओबिडिएंस चाहिए, डाउट नहीं चाहिए। अगर ओबिडिएंस नहीं है तो डाउट है, तो आपको गुरु कहीं ले नहीं जा सकता एक इंच। यह पहले ही इन्तजाम करता है कि शक किया कि भटके, संदेह किया कि गये। गुरु जो कहे वह परम सत्य है। तुम जानते नहीं हो, हम जानते हैं। तो हम जो बताते हैं तुम उस पर शक कैसे कर सकते हो? तुम जानते नहीं हो, तुम जान लोगे तब ठीक है। हमारे पीछे आओ। अब एक अंधेरा रास्ता शुरू हुआ, क्योंकि जहां हम गये नहीं थे वहां से यह आदमी हमें लौटने का रास्ता बता रहा है। एक बात अगर ठीक से ख्याल में आ जाय तो सवाल सिर्फ इतना है कि हम जो विचार की किरण बाहर भेजते हैं वह हमारी वापस लौट आये और वापस लौटने के लिए भी कुछ होना नहीं है, सच में लौटने की बात नहीं है। सिर्फ कल्पना में हम चले गये हैं जो लोभ पर सवार हो गयी है। फिर मोक्ष, स्वर्ग, मुक्ति सब लोभ पर सवार हो गये हैं और इसी लोभ का शोषण कर रहा है गुरु। गुरु जो है लोभ का शोषण कर रहा है इसलिए जिनकी धन की तृप्ति हो जायेगी वह फिर धर्म के लोभ में पड़ जायेंगे, वह कहेंगे, धन तो मिल गया, ठीक है, अब मोक्ष भी चाहिए। इस लोभ का शोषण कर रहा है गुरु। वह कह रहा है कि हम तुम्हें दिलवा देंगे जो चीज तुम्हें चाहिए। और इसीलिए मैं कहता हूं कि सब गुरुडम भ्रान्त है, खतरनाक है। ऐसा नहीं है कि कोई अच्छा गुरु होता है, कोई बुरा होता है। ऐसा नहीं है, गुरु मात्र गड़बड़ है। और दूसरी बात, बहुत-सी ऐसी

बातें एकदम से ख्याल में न आने से बड़ी मुश्किल हो जाती है। अब जैसे कि कोई भी एक टेकनीक है–करेगी क्या टेकनीक ! कुछ भी करे, अगर राम वाला है तो राम राम जपे, अल्ला वाला है तो अल्ला, जीसस वाला है तो जीसस, जो भी नाम है उसे जपो, उसे जोर से जपते रहो, जपते रहो, तो इस पूरे जपने की प्रक्रिया में किसी भी एक शब्द पर अगर आदमी का मन ठहरा दिया जाय तो मूर्च्छित हो जाता है। हिप्नोसिस की इतनी ही तरकीब है कुल। तो इससे आप अपने पर नहीं आते, कलकत्ता तो चले जाते हैं, पर आप अपने पर नहीं लौटते, आप मूर्च्छा में चले जाते हैं यानी स्वप्न से निद्रा में चले जाते हैं। आप स्वप्न से जागरण में नहीं आते क्योंकि कोई भी पुनरुक्ति 'डल' करती है। और इसलिए हम सबका दिमाग धीरे धीरे बिल्कुल 'डल' होता चला जाता है, क्योंकि हमें चौबीस घण्टे पुनरुक्ति करनी पड़ती है––रोज वही, रोज वही। इससे 'डलनेस' आती चली जाती है और जो ताजगी है मस्तिष्क की वह खत्म होने लगती है। क्योंकि सब 'रुटीन' हो जाता है, इसलिए नये का हमें इतना आनंद होता है। आप अगर अहमदाबाद से ऊब गये हैं, तो पहलगाम अच्छा लगता है। अहमदाबाद ने रिपीटीशन पैदा कर दी है, रोज रोज वही। जो पहलगाम का रहने वाला है उसे पहलगाम में आनन्द नहीं आ रहा है कोई, वह सोच रहा है कि अब कब अहमदाबाद देख ले, बंबई देख ले, पूना देख ले और जिस दिन देख लेगा उतना ही आनंदित होगा जितना आप हुए हैं क्योंकि उसकी यह रुटीन हो गयी है। यह 'डल' हो गया था, अब इसमें कुछ देखने की बात नहीं थी। सब वही था। रोज वही सूरज था, रोज वही चांद था, रोज वही पार्क, रोज वही दरख्त। आपने पहले दिन जैसे दरख्त देखे होंगे आज भी देखे होंगे। रोज की बात हो गयी, वह रिपिटीशन हो गया।

रिपिटीशन से ऐसा हो जाता है कि जैसे पहाड़ पर रहने वाला आदमी अब पहाड़ को देखता ही न हो। इसमें कोई कठिन बात नहीं। आप भी यहां रह जायेंगे यदि चार–छः महीने तो पहाड़ नहीं दिखायी पड़ेंगे और न पौधे दिखायी पड़ेंगे। रिपीट हो गयी बात। नये के प्रति माइंड जागता है, पुराने के प्रति डल हो जाता है। फिर हम जो भी करते हैं वह सभी रिपिटीशन हो जाता है। हम जो करेंगे वह जो रिपीट करेंगे, रिपीटीशन में सब डलनेस आ जायेगी। और मजे की बात यह है कि अगर हम कुछ न करें, सिर्फ हों, तो रिपीट करने का प्रश्न ही नहीं उठता। वह अनरिपीटेबल एक्सपीरिएंस है, क्योंकि हम कुछ करते नहीं हैं जिसको हम रिपीट कर सकें। कुछ करते तो

रिपीट हो सकता था। हम कुछ करत नहीं हैं, हम सिर्फ होते हैं—तो एक रिजर्वायर हो जाता है माइंड पर—कहीं नहीं जा रहा है बाहर, कहीं नहीं जा रहा है, ठहर गया है। चारों तरफ बांध है, झरना एक झील बन गया है, कहीं जा नहीं रहा है, कहीं जाने की कोई बात ही नहीं, सब अनंत झील है, एक लहर भी नहीं है, तो सारी शक्ति, सारी ताजगी, सारा युवापन उस स्थिति में पैदा हो जायगा। वह युवापन, वह शक्ति, वह डायनमिक फोर्स, वह रिपीट करेगी बहुत कुछ, लेकिन तब आप आकुपाइड नहीं होंगे। वह क्रिएट करेगी अटोमेटिक—जैसे वृक्ष से फूल आ रहा है वैसे आपसे भी चीजें आयेंगी। लेकिन आप फिर उनको कर नहीं रहे हैं, वह हो रही हैं और जब हो रही हैं तब आपके मन पर का बोझ गया। तो आपके मन पर कोई बोझ नहीं है, कोई भार नहीं है। ऐसी स्थिति में जो अनुभव होगा, वह अनुभव तो मुक्ति का है, निर्भार होने का है। लोग चाहें तो इस तरह की शांति के झूठे अनुभव पैदा कर सकते हैं और मन की सबसे बड़ी ताकत यह है कि वह झूठे अनुभव प्रोजेक्ट कर सकता है।

एक साधु थे हिमालय में कोई तीस वर्ष। तीस वर्ष में उनको पक्का अनुभव हो गया है कि भगवान के दर्शन हो गये हैं। भगवान रोज दिखायी पड़ने लगे। बातचीत होने लगी, दर्शन हो गया, अब शक का कोई उपाय नहीं था। जब सामने ही भगवान दीखता हो, तो और क्या संदेह करना है। फिर वह वहां से लौटे और नीचे आये और उन्होंने सोचा कि, जो भगवान हम देखते थे, वह पांव से तो नहीं दीखते थे, तो उन्होंने शक पकड़ा कि कहीं मेरा इलूजन तो नहीं है। यह जो मैं कर रहा हूं तीस साल से निरंतर भूखे–प्यासे, इसी की धारणा करने से कहीं दिखायी तो नहीं पड़ने लगा। फिर उन्होंने कहा कि वह जो अभ्यास करता रहा हूं, उसे छोड़ूं कुछ दिन के लिए और फिर भी यह दिखायी पड़ता रहे, तो समझूंगा कि अभ्यासजन्य नहीं है, सच में है। अभ्यास गया कि भगवान गये, तो वह अभ्यासजन्य है।

एक सूफी फकीर को मेरे पास लाया गया। सबमें भगवान दिखायी पड़ता है उसे—पौधे में, पत्थर में, सबमें भगवान दिखायी पड़ता है। चलता है रास्ते पर, तो सब तरफ भगवान को देखता है और बड़ा आनंदित है। मेरे पास कुछ मुसलमान उसे लेकर आये और उन्होंने कहा, बहुत अद्‌भुत फकीर है। चारों तरफ भगवान ही दिखायी पड़ता है उसको। मैंने उनको कहा कि भगवान आपको अचानक दिखायी पड़े कि आपने कोई इन्तजाम या योजना की थी। उन्होंने कहा, अचा-

नक तो कुछ भी नहीं हो सकता और अचानक का भरोसा भी नहीं किया जा सकता। व्यवस्था की है, साधना की है, एक एक चीज में भगवान को देखना शुरू किया। फूल देखे तो मैं कहूं, भगवान है। लेकिन वह तीस वर्ष पहले की बात है। फिर निरंतर अभ्यास करते करते दिखायी पड़ने लगा। अब तो भगवान ही मुझे सब जगह दिखायी पड़ने लगा। तो मैंने उनसे कहा कि आप तीन दिन मेरे पास रुक जायें और अभ्यास बन्द कर दें। उन्होंने कहा, अभ्यास मैं कैसे बन्द कर सकता हूं? मैंने कहा, अब भी आप अभ्यास बन्द नहीं कर सकते जबकि भगवान दिखायी पड़ने लगा सब तरफ! तो अब भी आपके अभ्यास पर ही निर्भर है उसका दिखायी पड़ना। वे मेरे पास रुक गये। शायद दूसरे दिन दो बजे रात उन्होंने रोना शुरू किया। मैं उठकर गया। मैंने कहा, क्या हुआ? वह बहुत चिल्लाने लगे। उन्होंने कहा, सब बर्बाद कर दिया, सब मेरा नष्ट हो गया! मैं कैसे आदमी के यहां आ गया, किस कर्मों के फल से मैं आपके पास आ गया! मेरा तो सब खो गया, मुझे कुछ नहीं दिखायी पड़ता! फूल फूल दिखायी पड़ता है, पत्ते पत्ते दिखायी पड़ते हैं, मेरा अनुभव नष्ट हो गया! मैंने उनको कहा, जो अनुभव तीस साल साधने से दिखा और डेढ़ दिन न साधने से खो जाय उस अनुभव का मतलब समझते हैं? वह आपका प्रोजेक्शन है जिसको निरंतर प्रोजेक्ट करते रहो, तो ही खड़ा रह सकता है, नहीं तो खड़ा नही रह सकता है। जैसे कि हम फिल्म प्रोजेक्ट कर रहे हैं तो वहां परदे पर तो कुछ है नहीं। उसे हम प्रोजेक्ट कर रहे हैं तो है और एक सेकेण्ड अगर हमने प्रोजेक्शन बन्द किया, तो वहां परदा खाली हो गया। जैसे परदे पर हम कुछ चीज देख सकते हैं वैसे ही मन के परदे पर प्रोजेक्शन करना है और जब तक वह क्रम जारी रहेगा तब तक वह चीज दिखायी पड़ती रहेगी। अब मेरा कहना यह है कि वह चीज़ दिखायी पड़नी चाहिए जो हमारे अभ्यास पर निर्भर न हो।

तो महेश जी ने जो कहा उन्होंने ठीक कहा। यह ज्यादा सेफर है, सुरक्षित है, व्यवस्थित है, गणित का हिसाब है, इसमें ऐसा करेगा तो ऐसा होगा और वह बिल्कुल ठीक कह रहे हैं। लेकिन वह जो होगा इसके करने पर निर्भर है। वह ऐसा कर रहे हैं इसीलिए हो रहा है। यह ऐसा है जैसे शराब पी और मुझे बहुत बड़े बड़े फूल दिखायी पड़ने लगे और मैंने आपसे कहा कि आप शराब पियेंगे तो आपको भी बड़े बड़े फूल दिखायी पड़ेंगे, अगर न दिखायी पड़ें तो मुझसे आप कहना। आपने भी शराब पी और आपको भी बड़े फूल दिखायी पड़े और आपने कहा, यह बिल्कुल ठीक कहते हैं। फूल

बड़े दिखायी पड़ते हैं, फूल बड़े नहीं हैं। शराब में अगर फूल बड़ दिखायी देते हैं, तो फूल बड़े नहीं हैं। शराब सिर्फ आपके स्टेट्स आफ माइण्ड को हिप्नोटाइज़ कर देती है, कुछ और नहीं होता है। सवाल यह नहीं है कि हम क्या देख रहे हैं, सवाल यह है कि क्या है? यह सवाल नहीं है कि हम क्या रियलाइज कर लें, सवाल यह है कि हवाट इज, है क्या असल में? हमें कुछ नहीं रियलाइज करना है। हमें कोई प्रोजेक्ट नहीं करना है। हम तो पक्का करके नहीं जाते हैं कि हमको यह देखना है। यह अनुभव करना है, यह प्रतीति करनी है। पक्का करके जायेंगे तो सरल हो जायेगा। लेकिन माइण्ड का जाल इतना अद्‌भुत है, खोल इतनी अद्‌भुत है कि माइण्ड सब चीजें दिखला देता है जो आप देखना चाहें, इसमें कोई कठिनाई नहीं है। तो वह जो महिलाएं (महेश योगी के साथ विदेशी शिष्याएं) कहती हैं कि हमको तो अनुभव हो रहा है, वह ठीक कह रही हैं। वह समझ नहीं सकतीं, वह समझ इसलिए नहीं सकतीं कि डर है समझ लेने में। भय यह है कि अगर समझा कि इलूजन तो गया, और अभी चला जायेगा उनमें से आधे का, तो आज ही रात मुश्किल हो जायेगी उनका सोना। इतना ख्याल आपको दिला दूं कि कहीं इलूजन तो नहीं है और इतना ख्याल आपको पकड़ जाय तो इलूजन कल सुबह ही नहीं आयेगा। क्योंकि वह संदेह उस इलूजन को काट देगा, वह कल सुबह ही दिक्कत में पड़ जायेगा। गया वह काम से, क्योंकि एक दफा भी डाउट आ जाय कि इस वक्त जो मैं देख रहा हूं वह है भी? बस वह तो अनडाउट माइण्ड ही इलूजन क्रियेट कर सकता है। जो शक करता ही नहीं कभी, संदेह करता ही नहीं वह इलूजन क्रियेट कर सकता है। फिर यह जो इलूजन, इनके एक्सपीरिएंस सब फाल्स हो सकते हैं अगर मैंटली प्रोजेक्ट हैं। जैसे कि अमरीका में और फ्रांस में कुवे का एक मत चलता है। वह फ्रेंच विचारक था। वह कहता है, जो सोचो वह हो जाओ। वह कहता है कि तुम बीमार हो, तो सोचो कि मैं स्वस्थ हूं, तुम स्वस्थ हो जाओगे। और बड़े मजे की बात यह है कि बीमारी नहीं मिटती और आदमी स्वस्थ अनुभव करने लगता है। यह जो आदमी कल चल नहीं सकता था सड़क पर, वह चलने लगेगा। जो आदमी कल बिस्तर नहीं छोड़ सकता था वह बिस्तर छोड़ देगा, ताकत आती हुई मालूम पड़ेगी। वह बीमारी अपनी जगह खड़ी है, बीमारी कहीं गयी नहीं है और यह आदमी अगर खाट पर ही पड़ा रहता तो शायद बीमारी मिट सकती थी किसी वास्तविक इलाज से। अब यह बीमारी का इलाज भी नहीं करेगा क्योंकि एक इलूजन खड़ा हो गया है कि मैं स्वस्थ हूं,

कौन कहता है कि मैं बीमार हूं? कुवे कहता है कि कोई तुमसे कहे कि बीमार हो, तो मानो ही मत, इन्कार कर दो उसकी बात को। तुमने माना, बस तुम बीमार हो जाओगे। जरूर ऐसी बीमारियां हैं कि मानने से हो सकती हैं लेकिन वह झूठी हैं। और ऐसा स्वास्थ्य भी नहीं है, जो मानने से हो सकता है—वह झठा है। और असली और नकली स्वास्थ्य में फर्क करना बड़ा मुश्किल है। जो आप माने ही बैठे हैं कि आप सच में स्वस्थ हैं तो मेरा कहना है कि फर्क यह है कि नकली स्वास्थ्य को आपको मान-मानकर पैदा करना पड़ता है, असली स्वास्थ्य को आपको मान-मानकर पैदा नहीं करना पड़ता है। आप न मानें तो भी वह है। असली स्वास्थ्य जो है वह है, आपको मानना नहीं पड़ता। नकली स्वास्थ्य को मान—मानकर पैदा करना पड़ता है। तो शांति भी पैदा की जा सकती है जो नकली है, स्वास्थ्य भी पैदा किया जा सकता है जो नकली है, मोक्ष भी पैदा किया जा सकता है, भगवान भी पैदा किया जा सकता है जो नकली है। और नकली का पैदा करना सरल है एकदम, क्योंकि माइंड उसके लिए एकदम राजी हो जाता है। वह माइंड के लिए बड़ा सवाल है। असली को जानना कठिन है क्योंकि वह उसको जानने के लिए माइंड को विदा करने की जरूरत है और माइंड हमेशा सिक्योरिटी मानता है। वह अगर इस कमरे में भी रात सोयेगा तो वह पता लगा लेगा कि सब ताले दरवाजे बन्द हैं क्या? कोई खतरा तो नहीं है? वह अगर कोई किताब भी पढ़ेगा तो पता लगा लेगा कि किताब अच्छी है, कोई खराब बात तो उसमें नहीं लिखी गयी है? वह अगर किसी गुरु को भी पकड़ेगा, तो पहले पचास दफे पता लगा लेगा कि यह गुरु ठीक है? किसी को पहुंचाया है इसने? तो फिर मैं भी इसके पीछे जाऊं। माइंड जो है वह सिक्योरिटी मानता है क्योंकि वह डरता है कि कहीं मर न जाय और मजा यह है कि अगर आप उसको सिक्योरिटी देते चले जाते हैं, देते चले जाते हैं सब तरह की, वह मजबूत होता चला जाता है।

संन्यासी का मतलब है—जो कहता है हम कोई सिक्योरिटी नहीं मानते, हम नहीं सिक्योरिटी में जीते हैं, हम नहीं कहते कि कल कुछ मिलेगा, कल सुबह देखेंगे। वह आदमी बुरा है या भला हम क्यों सोचें? यदि वह बिस्तर उठाकर ले जायेगा, तो ले जायगा। यह मैं काहे को निर्णय लूं कि यह आदमी कैसा है? हम कुछ सोचते नहीं हैं, हम जीते हैं चुपचाप एक एक क्षण में। इतना इन-सिक्योरिटी में जो जीता है उसके ही माइंड में एक्सप्लोजन हो सकता है; क्योंकि माइंड फिर जी नहीं सकता, माइंड को मरना पड़ेगा। माइंड को चाहिए

व्यवस्था। वह व्यवस्था खत्म हो गयी, वह कहता था पैसे लेकर खीसे में चलूं, वह कहता था बैंक में इन्तजाम रखूं, वह कहता था कि भगवान के पास भी पुण्य की व्यवस्था रखूं, सब हिसाब करके रखूं ताकि कुछ गड़बड़ न हो जाय। और जितना ज्यादा हिसाब, उतनी ही मृत चीज उपलब्ध होती है। जितनी सिक्योरिटी उतना डेड आदमी है और जितनी इनसिक्योरिटी, जितनी जोखिम, जितनी रिस्क उतना लिविंग आदमी है। और मजा यह है कि भगवान के मामले में भी जोखिम लेने की तैयारी न हो, वहां भी हम पक्का करके ही चलें सब, तो फिर बहुत मुश्किल है। भगवान का मतलब यह है वह जो अननोन सागर है चारों तरफ खड़ा हुआ उसमें तो हमें कूद पड़ना पड़ेगा, किनारे को छोड़ कर। किनारा सिक्योर था बिल्कुल, वहां कोई खतरा न था। डूबने का कोई डर न था किनारे पर। किनारा बहुत सुरक्षित है और किनारे पर जो खड़ा है वह जिन्दगी भर खड़ा रह सकता है। सागर का अनुभव तो उसी को मिलता है,

व्यक्ति जब दूसरे के विचारों और शब्दों में कैद हो जाता है, तो सत्य के आकाश में उसकी स्वयं की उड़ने की क्षमता ही नष्ट हो जाती है।

जो कूद जाय किनारे से। खतरा है इसलिए जिन्दगी है वहां। और हमारा मन है जो कि निरंतर यह मांग करता है कि सब व्यवस्थित सिस्टमेटिक होना चाहिए। बड़े मजे की बात यह है कि जिन्दगी बिल्कुल सिस्टमेटिक नहीं है, जिन्दगी बहुत अव्यवस्थित है और अव्यवस्थित है इसलिए लिविंग है। आप फर्क कर लें। एक पत्थर बहुत सिस्टमेटिक है, एक फूल उतना सिस्टमेटिक नहीं है। फूल में जिन्दगी, है। पत्थर कल भी वहीं था आज भी वहीं है, परसों भी वहीं होगा। फूल सुबह वहां था, सांझ पड़े नहीं है। उसका कोई भरोसा नहीं है। अभी है, जोर की हवा चलेगी, गिर जायेगा। अभी सूरज निकलेगा, कुम्हला जायेगा। अभी है, बरसात आयेगी–मिट जायगा। पत्थर वहीं होगा। पत्थर बहुत सिस्टमेटिक है कांस्टेंट है। जैसा है वैसे ही है, सदा वहीं बैठा हुआ है। लेकिन पत्थर डैड है इसी अर्थों में और फूल में एक लिविंग क्वालिटी है।

मेरा कहना यह है कि जिस व्यक्ति को जितने गहरे सत्य की तरफ जाना हो उतने सुरक्षा के इन्तजाम छोड़कर जाना चाहिए, तो जान लेना चाहिए कि खतरे में है। सुरक्षित तो जिन्दगी यहीं है, वहां तो खतरा है। लेकिन यह जो

परम खतरे में उतरने की तैयारी करता है वह खतरे में उतरने की तैयारी ही उसके भीतर ट्रांसफर्मेशन बन जाती है क्योंकि इस खतरे में जाना, बदल जाना है। सब व्यवस्था छोड़कर, सब सुरक्षा छोड़कर जो उतर जाता है अनजान में, यह उतरने की तैयारी ही, यह करेज ही उसके भीतर नोटेशन बनता है, उसके भीतर परिवर्तन हो जाता है। और जितनी बड़ी असुरक्षा में हम जाने को तैयार हैं उतने ही हम वस्तुतः सुरक्षित हो जाते हैं—क्योंकि कोई भय न रहा, फिर कोई डर न रहा। नाप-जोख वालों ने तो स्वर्ग नर्क के नक्शे बना दिये, एक एक इंच की दूरी बता दी कि इतनी दूर पर फलां जगह है; ताकि पक्का रहे, कोई चीज अनजानी न रह जाय। लेकिन कुछ है जो अनजाना है निरंतर और वही परमात्मा है। वही जीवन है जो अनजाना है। जो मृत है कल उसके बाबत हम सुरक्षित हो सकते हैं, जो जीवित है वह कल कहां होगा, कुछ भी कहना मुश्किल है। जीवंत के साथ बड़ी कठिनाई है और हम सब व्यवस्था बनाकर उसको मार देते हैं। मजे की बात यह है कि जो भी सिस्टम बनायी जाय वह झूठी हो जाती है। झूठी इसलिए हो जाती है कि उसमें कंट्राडिक्शंस बरदाश्त नहीं किये जा सकते। तो उसमें कंट्राडिक्शंस अलग कर देने पड़ते हैं। तो वह ऐसा है जैसे कोई पेंटर चित्र बनाये। वह काला रंग भी लाता है, सफेद रंग भी लाता है और सफेद और काले को लाकर चित्र बना देता है लेकिन कंट्राडिक्शन है। फिर एक पेंटर आयेगा, वह कहेगा, इसमें बहुत 'कंट्राडिक्शंस' हैं—यह कहीं सफेद, कहीं काला यह कोई भरोसे की बात नहीं मालूम पड़ती। या तो काला ही काला हो तो साफ मालूम होता है कि क्या है, या सब सीधा सफेद हो तो मालूम पड़ता है कि क्या है। तो वह एक सफेद पेंटिंग बना दे, एक काली पेंटिंग बना दे तो वह दो चीजें हो गयीं—लेकिन उन दोनों में कोई पेंटिंग नहीं है। वह दोनों बिल्कुल साफ सुथरी हो गयीं, विरोधी चीजें हैं नहीं उनमें कोई। जिन्दगी पूरे विरोध से मिलकर बनी है। सब चीजें विरोधी हैं। इसलिए जो पूरी जिन्दगी को समझने जायेगा वह सब तरह के विरोधों को स्वीकार करेगा कि वह है। वह दोनों है और दोनों एक के ही रूप हैं। ऐसा अगर कोई कहेगा तो कंट्राडिक्शन मालूम पड़ेगा। यह तो बड़ी उल्टी बात हो गयी। जैसे कि समझ लें कि मैं कहता हूं कि उसे पाने के लिए कुछ भी नहीं करना है, लेकिन जो कुछ भी नहीं कर रहा है वह उसे पा लेगा, यह मैं नहीं कहता। यह कंट्राडिक्शन मालूम होता है।

मैं कहता हूं 'नाट डूइंग ऐनीथिंग' तो मतलब यह नहीं है कि डूइंग नथिंग।

सड़क पर चलने वाला भी कुछ कर रहा है। उसको हम कहते हैं कुछ भी नहीं कर रहा है। वह भी कुछ कर रहा है। मंदिर में बैठा आदमी भी कुछ कर रहा है, संन्यासी भी कुछ कर रहा है। सच में ऐसी दशा में कोई भी नहीं है जो कुछ भी नहीं कर रहा है। तो मैंने कहा बहुत कठिन है, इसलिए नहीं कठिन है कि कोई टेकनीक से सरल हो जायगा। यह कठिन इसलिए है कि हमारी करने की आदत मजबूत है और टेकनीक इसे सरल नहीं बनायेगी, इसे होने नहीं देगी क्योंकि टेकनीक फिर करने की आदत को मजबूत कर देगी। तो मामला है सारा यह कि मैं जो कहा रहा हूं यह न करना है। जैसा मैंने कहा, न करने को हम टेकनीक के द्वारा करेंगे तो सरल हो जायगा, क्योंकि कठिन है। कठिन मैं इसलिए नहीं कह रहा हूं कि वह सरल हो सकता है, कठिन मैं इसलिए कहा रहा हूं कि हमारे मन की आदत करने की है, न करने की उसकी आदत नहीं है और टेकनीक भी करना है। मन इसलिए राजी हो जायगा कि

विश्वास अन्धा है। और मनुष्य अन्धा हो तो ही उसे स्वयं के अमंगल में संलग्न किया जा सकता है।

चलो करते हैं लेकिन करे कोई कितना ही, करने से उस न करने पर कैसे पहुंच सकता है? डूइंग नान-डूइंग कैसे बन सकता है? वह तो किसी न किसी क्षण उसे जानना पड़ेगा कि डूइंग से नहीं होता और डूइंग जायेगी, तो नान-डूइंग शेष रह जायगी। जो बहुत सारी कठिनाई है न करने में वह ठहरने की है, तो कोई भी करना पकड़ा दिया जायगा आपको कि राम राम जपिये तो आप ठहर सकते हैं, फिर कोई कठिन नहीं है। लेकिन वह बात ही खत्म हो गयी। वह न करने में ठहरना था। फिर कई दफे, जैसे उन्होंने (महेश योगी ने) कहा—कोई सपना गहरा, कोई उथला। यह सवाल ही नहीं है। जैसे कोई आदमी कहे कि एक आदमी ने दो पैसे की चोरी की और एक आदमी ने दो लाख की चोरी की, तो एक की चोरी छोटी है और एक की बड़ी है। अगर कोई ठीक से समझेगा तो चोरी छोटी-बड़ी हो सकती है क्या? चोरी करना एक माइंड की बात है क्योंकि दो पैसे चुराता है कि दो लाख, सवाल ही नहीं है। दो पैसे चुराने में जितना चोर होना पड़ता है उतना ही दो लाख चुराने में भी होना पड़ता है। जो अन्तर है वह दो पैसे और दो लाख का है—चोरी का नहीं

है। चोरी करने वाले का जो चित्त है वह बिल्कुल समान है—चाहे वह दो पैसे चुराये, चाहे एक कंकड़ चुराये, चाहे दो करोड़ चुराये, चाहे दस करोड़ चुराये। कोई यह नहीं कह सकता है कि दो पैसे चुराने वाला छोटा चोर है, दो करोड़ चुराने कला बड़ा चोर । बड़े और छोटे कहीं चोर होते हैं? छोटे और बड़े अवसर होते हैं। चोर छोटा–बड़ा नहीं होता है। एक को दो पैसे चुराने का अवसर मिला है, एक को दो करोड़ चुराने का अवसर मिला है। चोर का माइंड है एक। चोरी छोटी–बड़ी नहीं होती।

एक आदमी सपना देख रहा है साधारण-सा हल्का फुल्का। एक आदमी बहुत गहरा सपना देख रहा है। यह जो फर्क हैं वे एक ही तरह के हैं—जैसे एक पैसे की चोरी की और लाख रुपये की चोरी की। सपना सपना है। नींद नींद है, उसका टूटना टूटना है। इन दोनों के बीच में सच में कोई भी सीढ़ी नहीं है। सोया हुआ आदमी सोया हुआ आदमी है, जागा हुआ आदमी जागा हुआ आदमी है। उन दोनों के बीच कोई गैप नहीं है। वह जिसने सीढ़ियां पार कर ली हैं वह आदमी थोड़ा जग गया है। यह आदमी थोड़ा और जग गया है। जाग जो है उसकी क्वांटिटी नहीं है कि थोड़ी–बड़ी हो सके। आप बिस्तर पर पड़े हैं। बाहर का आदमी कह सकता है कि यह आदमी थोड़ा–सा जग गया है, करवट बदलता है उसको देखकर, लेकिन आप पूरे जग गये हैं, पड़े रहें, यह दूसरी बात है। जाग ऐसी नहीं है कि थोड़े–से जग गये हैं आप। लेकिन आदमी को एकदम से यह बात कठिन मालूम पड़ती है। वह कहता है कि सीढ़ियां बता दीजिये तो पहली सीढ़ी दूसरी सीढ़ी, तीसरी सीढ़ी, ऐसी सीढ़ियां बताइए। हम पूरी सीढ़ी पर नहीं जाते, एक पर जायेंगे। तो आदमी की यह मांग जो है वही सीढ़ियां पैदा करवा देती है। और सीढ़ियां पैदा करने वाले हैं, जो जरा समझकर उपयोग कर सकते हैं। वह पचास सीढ़ियां बना देते हैं और तब उस वक्त संतोष देते हैं कि आप पहली सीढ़ी पर हैं, वह दूसरी सीढ़ी पर है, वह तीसरी सीढ़ी पर है। सबको तृप्ति मिल रही है। लेकिन जहां सीढ़ियां होती ही नहीं हैं वहां कैसी पहली सीढ़ी, कैसी दूसरी सीढ़ी, कैसी तीसरी सीढ़ी?

मेरी दृष्टि में अनुभूति सीढ़ी चढ़ने जैसी नहीं है, अनुभूति छत से कूदने जैसी है। उसमें कोई सीढ़ियां होतीं नहीं। लेकिन हमारा मन चढ़ना चाहता है, यह भी ध्यान रखना चाहिए। अहंकार चढ़ने में रस लेता है, उतरने में रस नहीं लेता और अहंकार कहता है चढ़ो कहीं ऊपर—और एक सीढ़ी, और एक सीढ़ी, और एक सीढ़ी। बस, सीढ़ियां किसी भी चीज की हों। इसलिए अहंकार

मार्ग पकड़ता है, पथ पकड़ता है, टेकनीक पकड़ता है, गुरु पकड़ता है, शास्त्र पकड़ता है, सब पकड़ता है। और धर्म कहता है—कूद जाओ, चढ़ने का यहां कहीं उपाय नहीं है, बिल्कुल उतर जाओ जहां तक उतर सकते हो और उतरना भी हो सकता था अगर सीढ़ियां होतीं। सीढ़ियां हैं ही नहीं, कूद ही सकते हैं। छलांग लगा सकते हैं। यह जो छलांग लगाने की हमारी हिम्मत नहीं जुटती है, तो हम कहते हैं कि यह ज्यादा हो जाता है, थोड़ा सिम्पल करो, सरल करो टेकनीक से, व्यवस्था से ताकि उसको हम टुकड़े टुकड़े में पा लें। एक खंड पहले पा लें, फिर एक खंड पा लें, इंस्टालमेंट में पा लें, यह हमारा ख्याल रहता है। किंतु वह इंस्टालमेंट में मिलता नहीं है। तभी तो हर आदमी खोज रहा है, शांति खोज रहा है, सुख खोज रहा है, आनंद खोज रहा है। किसी आदमी को कहो—खोजो मत, तो वह आदमी कहता है—मर गये! क्योंकि जहां वह खड़ा है वहां तो दुःख ही दुःख मालूम पड़ रहा है उसे। जैसे लगता है अगर न खोजें तो फिर गया, क्योंकि जो मैं हूं वहां तो दुःख, चिन्ता के सिवाय कुछ भी नहीं है, और आप कहते हैं मत खोजो तो फिर मैं गया, तो फिर क्या होगा? लेकिन उसे पता ही नहीं है कि न खोजने की चित्त की दशा क्या है? न खोजने की चित्त की दशा उसने कभी जानी ही नहीं। वह सदा ही खोजता रहा है—कभी खिलौने खोजता था, कभी पदवियां खोजता था, कभी मोक्ष खोजता था। छोटा-सा बच्चा खोजना शुरू कर देता है, मरता बुड्ढा तक खोजता रहता है। एक क्षण को पता नहीं चलता है कि खोजना क्या है? मेरे पास कोई आता है तो वह कहता है, आपके पास मैं खोज के लिए आया हूं। खोज तो हम पहले से ही नहीं रहे थे। जब मिलना होता तो पहले ही मिल जाता। मैंने कहा कि तुम खोज तो नहीं रहे थे, कुछ और खोज रहे थे, यह नहीं खोज रहे थे।

अंत में बतला देना चाहता हूं कि यह ठीक है, मेरा कोई गुरु नहीं है लेकिन इस वजह से मैं गुरु को इन्कार नहीं कर रहा हूं और न इस वजह से इन्कार कर रहा हूं कि चूंकि मैं नहीं बता सकता कि सिस्टम क्या है इसी-लिए इन्कार कर रहा हूं। सिस्टम बनाने से आसान कोई चीज नहीं है। आदमी थोड़ा सोच-विचार करना जानता हो तो सिस्टम बनाने में क्या तकलीफ है? बहुत सरल-सी बात है व्यवस्था बना लेने की। बड़ी बात तो अव्यवस्था में उतरना है। व्यवस्था बनानी तो बड़ी सरल बात है। अव्यवस्था में उतरना, अनार्की में उत-रना ही बड़ी बात है। और वह जितने लोग थे (महेश योगी के शिष्य) उनकी कठिनाई बहुत गहरी है। वह कठिनाई यह नहीं है वह सब डिफेंस में

लगे हुए हैं--क्योंकि गये। यह डिफेंस चल रहा है पूरे वक्त माइंड का। समझने का सवाल हो तो एकदम से बात दिखायी पड़ जाय। और इसलिए मेरी बात थोड़ी कठिन तो है--कठिन इसलिए कि हमारा माइंड जो चाहता हैं वह मैं नहीं दे रहा हूं और मैं वह दे नहीं सकता क्योंकि उसे देना माइंड को पुष्ट करना है, उसे मजबूत करना है और वह टूटना चाहिए, मजबूत होना नहीं चाहिये। क्योंकि जितना ही आप भीतर नान-डूइंग में उतर गये उतना ही आपके चारों तरफ डूइंग का बोध बहुत तीव्र भाव से होगा और तब आपकी डूइंग, आपके भीतर जो हुआ है उसको क्रिएट करने का, बांटने का, एक्सप्रेशन होगा। बहुत मौकों में होगा। वैसे आदमी चौबीस घंटे सक्रिय होगा, लेकिन भीतर बिल्कुल निष्क्रिय होगा। बाहर की डूइंग से कोई वास्ता ही नहीं है। और मजा यह है कि कई लोग बाहर की डूइंग छोड़कर भाग जाते हैं, भीतर की डूइंग जारी रखते हैं। बाहर तो कोई भी संन्यासी हो जाता है मकान छोड़कर लेकिन भीतर का काम जारी रखता है पूरे वक्त! ०००

त्याग आये तो सम्यक, किया जाये तो असम्यक हो जाता है। यह धर्म की समस्त साधना के संबंध में सत्य है।

संकलन : श्री लहरचंद शाह

"गांधी की अहिंसा में मेरी
कोई श्रद्धा कोई विश्वास नहीं है;
क्योंकि वह एक प्रकार की
सूक्ष्म हिंसा ही है...."

गांधी जी की अहिंसा की शल्य-क्रिया

एक मित्र ने पूछा है कि आप गांधी जी की अहिंसा में विश्वास नहीं करते हैं क्या? और यदि अहिंसा में विश्वास नहीं करते हैं गांधी की, तो क्या आपका विश्वास हिंसा में है?

पहली तो बात यह कि मेरा विश्वास हिंसा में जरा भी नहीं है और दूसरी बात यह कि गांधी की अहिंसा में भी विश्वास नहीं करता हूं। गांधी की अहिंसा में भी बहुत अहिंसा नहीं मालूम देती इसलिए गांधी की अहिंसा बहुत लचर और बहुत कमजोर है। गांधी की अहिंसा बहुत अधकचरी इसलिए लगती है कि पूर्ण अहिंसा में मेरी आस्था है। गांधी जी की अहिंसा को समझने से मुझे हैरानी होती है।

गांधी जी अफ्रीका में बोर युद्ध में वालंटियर की तरह सम्मिलित हुए। बोर अपनी आजादी की लड़ाई लड़ रहे थे और गांधी जी बोरों की आजादी की लड़ाई को दबाने के लिए, जो साम्राज्यशाही प्रयास कर रही थी उस साम्राज्यशाही की तरफ से, वालंटियर की तरह भरती हुए। गांधी जी पहले महायुद्ध में अंग्रेजों के एजेंट की तरह भारत में लोगों को मिलिट्री में भरती करवाने का काम करते रहे। यह बहुत हैरानी की बात मालूम पड़ती है कि पहले महायुद्ध में गांधी ने लोगों को मिलिट्री में भर्ती होने के लिए प्रेरणा दी और युद्ध में जूझने की प्रेरणा दी। पंजाब के गांवों में मुसलमानों ने बगावत कर दी। मुसलमानों को दबाने के

लिए अंग्रेजों ने गोरखों की पल्टन भेज दी थी। अंग्रेजों का इंसाफ था कि अगर हिन्दू किसी गांव में बगावत करें तो मुसलमानों की सेना-टुकड़ी भेजो और यदि मुसलमानों का गांव बगावत करे तो हिन्दुओं की टुकड़ी वहां भेजो, ताकि हिन्दू होने के कारण मुसलमानों को आग में झोंक सकें। गोरखों की टुकड़ी ने एक अद्‌भुत ऐतिहासिक कार्य किया। गोरखों की टुकड़ी ने मुसलमान बस्ती पर मुसलमान लोगों पर गोली चलाने से इन्कार कर दिया। वे बन्दूकों को जमीन पर टेक कर खड़े हो गये और उन्होंने कहा—हम अपने भाइयों पर गोली नहीं चलायेंगे। यह बड़ी अद्‌भुत और बड़ी अहिंसात्मक घटना थी। उन टुकड़ियों ने अपनी जान बाजी पर लगाकर गोली चलाने से इन्कार कर दिया। उन्होंने जाकर अपनी बंदूकें छावनी में जमा करवा दीं और जाकर समर्पण कर दिया और कहा कि गोली चलाने से इन्कार करते हैं, चाहे जो भी सजा दी जाय हम अपने भाइयों पर गोली नहीं चला सकते।

हम तो सोच सकते थे कि गांधी जी इन सैनिकों की प्रशंसा करेंगे, लेकिन गांधी जी ने इन सैनिकों की निन्दा की और इंगलैंड में जब गांधी जी से पूछा गया कि आश्चर्य की बात है कि आपने अहिंसक होते हुए इन सैनिकों की निन्दा की, जिन्होंने बन्दूकें चलाने से इन्कार किया; तो गांधी जी ने क्या कहा, आपको पता है? गांधी जी ने कहा—मैं सैनिकों को आज्ञाहीनता नहीं सिखा सकता हूं, क्योंकि कल जब देश आजाद हो जायगा और सत्ता हमारे हाथ में आ जायेगी तो इन्हीं सैनिकों के सहारे हमें शासन करना है।

यह किस प्रकार की अहिंसा है, यह थोड़ा विचारना है। वे सैनिक भी दंग रह गये होंगे। अगर गांधी जी ने इन लोगों की प्रशंसा की होती तो हिन्दुस्तान भर का सैनिक यह हिम्मत जुटा सकता था, और हिन्दुस्तानियों पर गोली चलाने से इन्कार कर देता। लेकिन गांधी जी ने इन सैनिकों की निन्दा की आज्ञाहीनता के आधार पर और कहा कि अहिंसा को तोड़ना उचित नहीं है। सैनिकों का कर्त्तव्य है कि वे आज्ञा मानें। क्यों? क्योंकि कल जब गांधी जी के लोगों के हाथ में देश आयेगा तो इन्हीं सैनिकों के सहारे हुकूमत करनी है। अब हम देख रहे हैं कि २२ वर्ष की आजादी के इतिहास में गांधी जी के पीछे चलने वाले लोगों के हाथ में जबसे सत्ता आयी है, हिन्दुस्तान में जितनी गोली चली हैं उतनी दुनिया के इतिहास में शायद ही कहीं चली हैं। ये गोलियां सत्ता के चलाये जाने के काम में लायी जा रही हैं। अब सत्ता गांधीवादियों के हाथ में। अंग्रेजों ने भी कभी हिन्दुस्तान में इतनी गोलियाँ नहीं चलायी थीं जितनी कि, जिसको हम अपनी

हुकूमत कहते हैं, उसने चलायीं और जिस बेरहमी से गोली चलायीं और जितने लोगों की हत्या की; यह बहुत हैरानी की बात है। लेकिन यह भी साथ में समझ लेना जरूरी है कि गांधी जी अहिंसात्मक रूप से जो आंदोलन चलाते थे वह आंदोलन ही दबाव, प्रेशर डालने के लिए है। मेरी दृष्टि में जहां दबाव है वहां हिंसा है। चाहे दबाव कहीं से डाला जाय, चाहे आपके घर के सामने अनशन करके बैठ जाऊं और कहूं कि मैं मर जाऊंगा अगर मेरी बात नहीं मानोगे। यह दबाव ही हिंसा है। दबाव मात्र हिंसा है। दबाव डालने के ढंग अहिंसात्मक हो सकते हैं लेकिन दबाव खुद हिंसा है। अगर मैं अपनी बात मनवाने के लिए अपनी जान दांव पर लगा दूं और कहूं कि मैं मर जाऊंगा तो जिसको हम सत्याग्रह कहते हैं और अनशन कहते हैं वह क्या है? वह आत्महत्या की धमकी है और वह धमकी हिंसा है। चाहे दूसरे को मारने की धमकी हो, चाहे अपने को मारने की धमकी हो। धमकी सदा हिंसात्मक है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वह धमकी अपने लिए है या दूसरे के लिए है। और कई बार यह भी हो सकता है कि मैं आपको मारने के लिए धमकी दूं तो आप मेरा मुकाबला कर सकते हैं, लेकिन जब मैं अपने को मारने की धमकी देता हूं, तो आपको निहत्था कर देता हूं, आप मुकाबला नहीं कर सकते हैं। यह हिंसा ज्यादा सूक्ष्म है और बहुत टिकी हुई है। इसका पता चलाना बहुत मुश्किल है। अगर अहिंसात्मक सत्याग्रह किसी को करना हो तो, न तो खबर करनी चाहिए, न जनता को पता चलना चाहिए, न जिस आदमी के हृदय-परिवर्तन के लिए कोशिश कर रहा हूं उसको खबर करनी चाहिए। मौन, एकांत में मैं अपने को शांत करूं, ध्यानस्थ हो जाऊं, समाधिस्थ हो जाऊं, अपने को पवित्र करूं और प्रार्थना करूं और हृदय में वे विचार भी हों जो दूसरे व्यक्ति को परिवर्तित करते रहें, तब तो यह अहिंसा हुई। लेकिन अगर अखबारों में प्रचार हो, भीड़भाड़ को पता चल जाय, मेरी जान को बचाने वाले लोग खुश हो जायं और जिस आदमी को बदलना चाहता हूं उसके दरवाजे पर बैठ जाऊं और कहूं कि मैं मर जाऊंगा। यह अहिंसा नहीं है। यह सब हिंसा है, यह हिंसा का ही रूपांतरण है, ये हिंसा के ही श्रेष्ठतम छद्म रूप हैं।

मैंने एक मजाक सुना है। मैंने सुना है, एक युवक एक युवती को प्रेम करता था और उसके प्रेम में दीवाना था, लेकिन इतना कमजोर था कि हिम्मत भी नहीं जुटा पाता था कि विवाह करके उस लड़की को घर ले आये, क्योंकि लड़की का बाप राजी नहीं था। फिर किसी समझदार ज्ञानी ने उसे सलाह दी

कि अहिंसात्मक सत्याग्रह क्यों नहीं करता ? कमजोर और कायर वह था। उसको यह बात जंच गयी। कायरों को अहिंसा की बात एकदम जंच जाती है इसलिए नहीं कि अहिंसा ठीक है, बल्कि कायर इतने कमजोर होते हैं कि कुछ और नहीं कर सकते। गांधी जी की अहिंसा का जो प्रभाव इस देश पर पड़ा वह इसलिए नहीं कि लोगों को अहिंसा ठीक मालूम पड़ी। लोग हजारों साल के कायर हैं और कायरों को यह बात समझ में पड़ गयी है कि ठीक है, इसमें मरने मारने का डर नहीं है, हम आगे जा सकते हैं। लेकिन तिलक प्रभावित नहीं हो सके, सुभाष प्रभावित नहीं हो सके। भगतसिंह फांसी पर लटक गया और हिन्दुस्तान में एक पत्थर नहीं फेंका गया उसके विरोध में। उसका कुल कारण यह था कि हिन्दुस्तान जन्मजात कायरता में पोषित हुआ है। भगतसिंह फांसी पर लटक रहे थे, गांधीजी बायसराय से समझौता कर रहे थे और उस समझौते में हिन्दुस्तान के लोगों को आशा थी कि शायद भगतसिंह बचा लिया जायगा, लेकिन गांधीजी ने एक शर्त रखी कि मेरे साथ जो समझौता हो रहा है उस समझौते के आधार पर सारे कैदी छोड़ दिये जायेंगे, लेकिन सिर्फ वे ही कैदी जो अहिंसात्मक कैदी होंगे। उसमें भगतसिंह नहीं बच सके, क्योंकि उसमें एक शर्त जुड़ी हुई थी कि अहिंसात्मक कैदी ही सिर्फ छोड़े जायेंगे। भगतसिंह को फांसी लग गयी। जिस दिन हिन्दुस्तान में भगतसिंह को फांसी हुई उस दिन हिन्दुस्तान की जवानी को भी फांसी हो गयी। उसी दिन हिन्दुस्तान को इतना बड़ा धक्का लगा जिसका कोई हिसाब नहीं। गांधी की भीख के साथ हिन्दुस्तान का बुढ़ापा जीता, भगतसिंह की मौत के साथ हिन्दुस्तान की जवानी मरी !

हां, तो उस युवक को किसी ने सलाह दी, तू पागल है, तेरे से कुछ और नहीं बन सकेगा, अहिंसात्मक सत्याग्रह कर दे। वह जाकर उस लड़की के घर के सामने बिस्तर लगाकर बैठ गया और कहा कि मैं भूखा मर जाऊंगा, आमरण अनशन करता हूं, मेरे साथ विवाह करो। घर के लोग बहुत घबराये, क्योंकि वह और कुछ धमकी देता तो पुलिस को खबर करते, लेकिन उसने अहिंसात्मक आंदोलन चलाया था और गांव के लड़के भी उसका चक्कर लगाने लगे। वह अहिंसात्मक आंदोलन है, कोई साधारण आन्दोलन नहीं है और प्रेम में भी अहिंसात्मक आंदोलन होना ही चाहिए ! घर के लोग बहुत घबराये। फिर बाप को किसी ने सलाह दी कि गांव में जाओ, किसी रचनात्मक, किसी सर्वोदयी, किसी समझदार से सलाह लो कि अनशन में क्या किया जा सकता है ? करीब करीब हर गांव में ऐसे लोग हैं जिनके पास और कोई काम नहीं है। वे रचनात्मक काम घर बैठे करते

हैं। बाप ने जाकर पूछा, हम क्या करें बड़ी मुश्किल में पड़ गये हैं? अगर वह छुरी लेकर धमकी देता तो हमारे पास इन्तजाम था, हमारे पास बन्दूक है; लेकिन वह मरने की धमकी देता है, अहिंसा से। उस आदमी ने कहा– घबराओ मत, रात मैं आऊंगा, वह भाग जायेगा। वह रात को एक बूढ़ी वेश्या को पकड़ लाया। उस वेश्या ने जाकर उस लड़के के सामने बिस्तर लगा दिया और कहा कि आमरण अनशन करती हूं, तुमसे विवाह करना चाहती हूं। वह रात बिस्तर लेकर लड़का भाग गया।

गांधीजी ने अहिंसात्मक आंदोलन के नाम पर, अनशन के नाम पर जो प्रतिक्रिया चलायी थी, हिन्दुस्तान उस प्रतिक्रिया से बरबाद हो रहा है। हर तरह की नासमझी इस आन्दोलन के पीछे चल रही है। किसी को आन्ध्र अलग करना हो तो अनशन कर दो, कुछ भी करना हो आप दबाव डाल सकते हैं और हिन्दुस्तान को टुकड़े टुकड़े किया जा रहा है, हिन्दुस्तान को नष्ट किया जा रहा है। वह एक दबाव मिल गया है आदमी को दबाने का। मर जायेंगे, अनशन कर देंगे, यह सिर्फ हिंसात्मक रूप है, अहिंसा नहीं है। जबतक किसी आदमी को जोर जबरदस्ती से बदलना चाहता हूं चाहे वह जोर जबरदस्ती किसी भी तरह की हो, उसका रूप कुछ भी हो, तबतक मैं हिंसात्मक हूं। मैं गांधी जी की अहिंसा के पक्ष में नहीं हूं– उसका यह मतलब न लें कि मैं अहिंसा के पक्ष में नहीं हूं। अखबार यही छापते हैं कि मैं अहिंसा के पक्ष में नहीं हूं। मैं गांधी जी की अहिंसा के पक्ष में नहीं हूं क्योंकि मैं अहिंसा के पक्ष में हूं। लेकिन उसको मैं अहिंसा नहीं मानता इसलिए मैं पक्ष में नहीं हूं। गांधी जी की अहिंसा चाहे गांधी जी को पता हो या न हो, हिंसा करेगी। यह हिंसा बड़ी सूक्ष्म है। एक आदमी को मार डालना भी हिंसा है और एक आदमी को अपनी इच्छा के अनुकूल ढालना भी हिंसा है। जब एक गुरु दस-पच्चीस शिष्यों की भीड़ इकट्ठी करके उनको ढालने की कोशिश करता है अपने जैसा बनाने की–जैसे कपड़े मैं पहनता हूं वैसे कपड़े पहनो, जब मैं उठता हूं ब्राह्म मुहूर्त में तब तुम उठो, जो मैं करता हूं वही तुम करो, तो हमें पता नहीं है, यह चित्त बड़ी सूक्ष्म हिंसा की बात सोच रहा है। दूसरे आदमी को बदलने की चेष्टा में, दूसरे आदमी को अपने जैसा बनाने की चेष्टा में आदमी भी हिंसा करता है। जब एक बाप अपने बेटे को अपने जैसा बनाने की कोशिश करता है तो बाप को पता है, यह हिंसा है। जब एक बाप कहता है कि तू मेरे जैसा बनना तो दो बातें काम कर रही हैं। एक तो बाप का अहंकार और दूसरे मेरे बेटे को मैं अपने जैसा बनाकर छोड़ूंगा। यह प्रेम

नहीं है। सारे गुरु, लोगों को अपने जैसा बनाने की जैसी कोशिश में सम्मिलित होते हैं, उस कोशिश में आदमी हिंसा करता है। जो आदमी अहिंसक है वह आदमी किसी आदमी को अपने जैसे नहीं बनायेगा। जो आदमी अहिंसक है वह कहता है कि तुम अपने ही जैसे बन जाओ बस यही काफी है, मेरे जैसे बनने की कोई जरूरत नहीं है। कोई अहिंसात्मक आदमी किसी को अपना अनुयायी नहीं बना सकता है, क्योंकि अनुयायी बनाना सूक्ष्म हिंसा है। कोई अहिंसक व्यक्ति किसी को अपना शिष्य नहीं बना सकता है, क्योंकि गुरु बनने जैसी हिंसा खोजनी दुनिया में बहुत मुश्किल है, लेकिन ये सूक्ष्म हिंसाएं हैं जो दिखायी नहीं देतीं। और यह भी ध्यान रहे कि जब कोई आदमी दूसरे के साथ हिंसा करना बन्द कर देता है तो हिंसा की प्रवृत्ति नष्ट नहीं हो जाती, हिंसा की प्रवृत्ति स्वयं पर लौट आती है। वह अपने साथ हिंसा करना शुरू कर देता है। जिसको हम तपश्चर्या कहते हैं, तप कहते हैं, त्याग कहते हैं, सौ में ९९ मौके पर अपने पर लौटी हुई हिंसा के ये दूसरे नाम हैं और कुछ भी नहीं।

एक आदमी दूसरे को सताना चाहता है—अंग्रेजी में एक शब्द सेडिस्ट है, जो भी आदमी दूसरे को सताना चाहता है उसको वे कहते हैं सेडिस्ट, उसे वे कहते हैं परपीड़नवादी। एक दूसरा शब्द है मेसोकिस्ट, जो आदमी अपने को ही सताने में लगा लेता है उसको वह कहता है आत्मपीड़नवादी। हम दूसरों को सताने वाले को तो हिंसक कहते हैं, लेकिन खुद को सताने वाले को हिंसक नहीं कहते हैं और मजा यह है कि दूसरे को सताने को तो दुनिया बाधा डाल सकती है, पर स्वयं को सताने में कोई भी बाधा नहीं डाल सकता है। स्वयं को सताने में प्रत्येक आदमी मुक्त है। यह जो तपश्चर्या करने वाले लोग हैं, ये कांटों में खड़े लोग हैं, धूप में खड़े लोग हैं, भूख और उपवास करने वाले लोग हैं। अगर इनकी पूरी कथा आप समझें और इनकी ईजादें आप पता लगायें कि कैसे कैसे अपने को सताने के उपाय निकालते हैं! कैसे उनको साधु कहें, वह बहुत मुश्किल है, जो अपनी जननेन्द्रियां काट लेते रहे। ऐसे साधु रहे हैं जिन्होंने अपनी आंखें फोड़ लीं और महात्मा हो गये, और ऐसे साधु रहे जो पैर के जूते में कीलें लगाते रहे ताकि पैर में घाव बनते रहें। कमर में पट्टे बांधते रहे और कीलें लगाते रहे ताकि कमर में घाव बनते रहें। शरीर को सब तरह से कोड़े मारने वाले साधुओं की लंबी जमात रही है। वे कोड़े मारने वाले साधु सुबह से उठकर कोड़े मार रहे हैं और जो जितने ज्यादा कोड़े मारेगा उतना बड़ा साधु हो जायगा।

ये सारे के सारे लोग हिंसक लोग हैं, ये अहिंसक लोग नहीं हैं, सिर्फ फर्क इतना है कि इनकी हिंसा दूसरे पर न जाकर स्वयं पर लौट आयी है। उसने वापस लौटना शुरू कर दिया है। अहिंसा बहुत अद्भुत बात है, लेकिन हिंसा से बचना बहुत मुश्किल है। हिंसा को बदल लेना बहुत आसान है, हिंसा नये रूपों में खड़ी हो जाती है। दूसरों को बदलने की चिंता, दूसरों को बदलने का दबाव, दूसरों को अपने जैसा बनाने की सारी कोशिश हिंसा है और दुनिया के सारे गुरुओं को और दुनिया के इन सारे लोगों को जो अनुयाइयों की भीड़ इकट्ठी करते हैं, जमातें खड़ी करते हैं और अपनी शकल के आदमी पैदा करते हैं—उन सबको मैं एक कतार में हिंसक मानता हूं। अहिंसक व्यक्ति बिल्कुल ही दूसरी बात है। अहिंसक का मतलब है ऐसा व्यक्ति, जो किसी पर भी किसी तरह का दबाव डालने की कामना से मुक्त हो गया है, क्योंकि दबाव डालकर हम दूसरे से श्रेष्ठ हो जाते हैं। क्या आपने कभी ख्याल किया है, छुरा बताकर आप दूसरे से श्रेष्ठ नहीं होते लेकिन अनशन करके आप दूसरों से श्रेष्ठ हो जाते हैं। नीत्से ने एक बात कहीं है मजाक में जीसस के खिलाफ कि जीसस का कहना है कि यदि कोई एक गाल पर तुम्हारे चांटा मारे तो दूसरा गाल भी उसके सामने कर देना। नीत्से ने कहा है, इससे ज्यादा अपमान दूसरे आदमी का और क्या हो सकता है! तुमने उसे आदमी ही नहीं माना, अपने बराबर भी नहीं माना। किसी ने चांटा मारा तुम्हारे गाल पर, तुमने दूसरा गाल कर दिया। खुद दूसरे आदमी की तुलना में देवता हो गया, दूसरा जमीन का कीड़ा हो गया। नीत्से ने कहा है कि दूसरे आदमी का इससे बड़ा अपमान और क्या हो सकता है? और यह हो सकता है कि कोई आदमी प्रेम के कारण दूसरा गाल न करे, सिर्फ इसलिए दूसरा गाल कर दे कि देख लो, तुम हो जमीन के कीड़े, हम हैं फरिश्ते, हम हैं देवता। दूसरे से ऊंचा होने की तरकीब इतनी बारीक है कि एक आदमी दूसरे से ऊंचा हो सकता है सिंहासन पर बैठकर और एक आदमी दूसरे से ऊंचा हो सकता है त्याग करके। लेकिन दूसरे से ऊंचा होने की कामना अगर भीतर शेष है, तो वह कामना हिंसा में ले जाती है, अहिंसा में नहीं। जब भी हम दूसरे से ऊंचा होने की कामना में संलग्न हो जाते हैं, चाहे हमें ज्ञात हो और ज्ञात न हो, चाहे हमें कांसेसली पता हो और चाहे अनकांसेस माइंड काम कर रहा हो, चाहे अचेतन मन काम कर रहा हो और हमें पता न हो, लेकिन दूसरे को बदलने की कोशिश में स्वयं की श्रेष्ठता भीतर अनुभव होनी शुरू हो जाती है।

मैं इस सबसे बुनियादी रूप से खिलाफ हूं। मैं मानता हूं कि व्यक्ति प्रार्थना कर सकता है, ध्यान कर सकता है, व्यक्ति अंतस को शुद्ध कर सकता है और उसके अंतस की शुद्धि के कारण उसके चारों तरफ के दबावों में परिवर्तन शुरू हो जायेगा। लेकिन वह परिवर्तन उस व्यक्ति की चेष्टा नहीं है, उस व्यक्ति का प्रयास नहीं है। महावीर और बुद्ध भी अहिंसक थे। गांधी की अहिंसा से मैं उनकी अहिंसा को श्रेष्ठतर और शुद्धतर मानता हूं। गांधी के और बुद्ध के बीच हम और करें कुछ बातें तो पता चलेगा। महावीर और बुद्ध किसी को बदलने के लिए कोई अहिंसक आंदोलन नहीं कर रहे हैं, लेकिन भीतर आत्मा प्रविष्ट हुई है, उसकी किरणें आयेंगी और बिना प्रयास के चारों तरफ बदलाहट लानी शुरू करती हैं। अहिंसक आदमी ने दुनिया में पहले भी अपनी हिंसा की किरणों दी हैं लेकिन वे किरणें प्यार करके दी गयी हैं, चेष्टा करके नहीं दी गयी हैं। वे किरणें उपलब्ध होती हैं। सूरज निकलता है और अंधेरा विलीन हो जाता है। सूरज कोई घोषणा नहीं करता कि कि अंधेरे को दूर करने मैं आ गया हूं, अंधेरा सावधान!

अहिंसा कुछ करती नहीं है, अहिंसा से परिवर्तन आता है। अहिंसक परिवर्तन चाहता नहीं। गांधी की अहिंसा में परिवर्तन की चाह बहुत स्पष्ट है, इसलिए मैं उसे अहिंसा नहीं मानता हूं। गांधी की अहिंसा में मेरी कोई श्रद्धा, कोई विश्वास नहीं है क्योंकि वह अहिंसा ही मुझे दिखायी नहीं पड़ती। मैं कोई हिंसा का पक्षपाती नहीं हूं, मुझसे ज्यादा हिंसा का दुश्मन खोजना कठिन है, क्योंकि अहिंसा में ही जहां मुझे हिंसा दिखायी पड़ती हो उस हिंसा से मैं राजी नहीं हो सकता हूं।

एक दूसरे मित्र ने इसी संबंध में पूछा है कि आप कहते हैं कि क्रांति अहिंसक ही हो सकती है लेकिन क्रांति तो सदा हिंसक होती है, अहिंसक क्रांति तो कभी नहीं होती।

जिस क्रांति में हिंसा है उसे मैं क्रांति नहीं कहता। वह क्रांति नहीं है, सिर्फ उपद्रव है। उपद्रव और क्रांति में बहुत फर्क है। जिस क्रांति के साथ हिंसा जुड़ गयी वह क्रांति खत्म हो गयी। हिंसा से क्रांति खत्म है क्योंकि क्रांति का अंतिम अर्थ क्या है? क्रांति का अंतिम अर्थ है आत्मिक परिवर्तन, हार्दिक परिवर्तन, लोगों की चेतना का बदल जाना। और जब हम लोगों की चेतना को नहीं बदल पाते हैं, जब लोगों की चेतना नहीं बदलती है, तब हम हिंसा पर उतारू हो जाते हैं। लेकिन जो आदमी हिंसा पर उतारू हो जाता है वह लोगों की चेतना

बदल सकेगा ? इस संबंध में रूस ने एक करोड़ लोगों की कम से कम हत्या की। एक करोड़ लोगों की हत्या करके भी क्या किसी व्यक्ति की चेतना को बदला जा सका, किसी को रूपान्तरित किया जा सका ? हिटलर ने भी करीब अस्सी लाख लोगों की हत्या की, लेकिन क्या रूपान्तरण हो गया ? कौन सी क्रांति हो गयी! सामान बांट दिया गया, संपत्ति व्यक्तिगत न रही, जो एक करोड़ लोगों को बिना मारे भी हो सकता था! एक करोड़ लोगों को मारने के कारण जो परिवर्तन हुआ वह इतना तनावपूर्ण है कि जबतक हिंसा ऊपर छाती पर सवार है तभी तक उसको कायम रखा जा सकता है अन्यथा परिवर्तन विलीन होना शुरू हो जायगा। स्टालिन के जाने के बाद रूस के कदम विकास की तरफ निश्चित रूप से उठे। स्टालिन के हटते ही जैसे हिंसा कम हुई है। रूस के कदम विकास की तरफ उठे। रूस में जबसे व्यक्तिगत संपत्ति का पुनर्आगमन हुआ, रूस में कारें व्यक्तिगत रूप से रखी जा सकती हैं, जिसकी वहां कल तक कल्पना नहीं थी। मकान भी व्यक्तिगत हो सकता है, तनख्वाहों में भी फर्क पैदा हुए, जैसे कि हिंसा से लायी हुई क्रांति विलीन हो जायेगी। हिंसा से लायी गयी क्रांति जबरदस्ती है और जबरदस्ती कहीं क्रांति लायी जा सकती है! जबरदस्ती थोड़ा बहुत देर किसी को रोका जा सकता है। जिस चीज को जबरदस्ती से रोकना पड़ता है उसके खिलाफ लोगों का विद्रोह होना शुरू हो जाता है, अच्छे काम भी अगर जबरदस्ती करवाये जायं। आप यहां बैठे हैं, आप अपनी मौज से यहां आये हैं और अगर आपको अभी खबर की जाय कि आप दो घंटे तक बाहर नहीं निकल सकते हैं, बस यहां बैठना असंभव हो जायेगा। आदमी के साथ आत्मा है, आदमी की आत्मा दबाव को इन्कार करती है और करनी चाहिए, चाहे वह दबाव अच्छे के लिए ही क्यों न डाला गया हो। दबाव दबाव है। आदमी के अच्छे के लिए भी दबाव डालने पर आदमी विद्रोह करता है। आपको पता है, अच्छे मां–बाप अपने बेटों को बिगाड़ने का बुनियादी कारण बनते हैं। पता है आपको क्यों ? अच्छे मां-बाप जबरदस्ती बच्चे को अच्छा बनाने की कोशिश करते हैं। दुनिया में कभी किसी को जबरदस्ती अच्छा नहीं बनाया गया है और जो मां-बाप अपने बच्चे को जबरदस्ती अच्छा बनाते हैं वह मां-बाप बच्चों के दुश्मन हैं और अपने बच्चे को बिगाड़ने का काम करते हैं। क्योंकि बच्चे विद्रोह करना शुरू करते हैं। बच्चे के पास जो आत्मा है वह इन्कार करना चाहती है जबरदस्ती को और अगर अच्छे के लिए जबरदस्ती की गयी तो फिर अच्छे को इन्कार करना चाहते हैं क्योंकि जबरदस्ती को इन्कार करने से हिंसा शुरू हो जायगी।क्योंकि कोई भी

बात जबरदस्ती से नहीं लायी जा सकती और जबरदस्ती से लाने का मतलब यह है कि लाने वाला बहुत कमजोर है, लोगों को समझा नहीं पाता है, लोगों के हृदय को, मस्तिष्क को राजी नहीं कर पाता है। और जब आप लोगों को राजी नहीं कर पाते हैं उनके अच्छे के लिए भी, तो फिर आपकी वह अच्छाई बड़ी संकुचित है। दुनिया में कोई क्रांति हिंसा से नहीं हो सकती है। हां, क्रांति के नाम से हिंसा पलती रही है, लेकिन अबतक कौन सी क्रांति हो गयी है दुनिया में! नहीं, हिंसा से क्रांति हो ही नहीं सकती।

जिस क्रांति में दमन नहीं होगा, जिस क्रांति में छाती पर दबाव नहीं होगा, जो क्रांति भीतर से फूल की तरह खिलेगी और व्यक्तित्व को बदल देगी—मनुष्य में उस क्रांति की प्रतिष्ठा होगी। फ्रांस की क्रांति असफल हो गयी क्योंकि वह हिंसा पर खड़ी थी, रूस की क्रांति सफल नहीं सकी क्योंकि वह हिंसा पर खड़ी थी। माओ जो क्रांति करवा रहा है चीन में वह सफल नहीं होगी क्योंकि वह हिंसा पर खड़ी है। गांधी की क्रांति जो कि बड़ी अहिंसात्मक दिखायी पड़ती थी वह भी असफल हो गयी क्योंकि बुनियाद में उसके हिंसा थी। हम देख रहे हैं अपने मुल्क में, गांधी की क्रांति, जो कि एक तरह से लाख दरजे बेहतर क्रांति है। माओ से हजार दर्जे की बेहतर क्रांति है। जिसका कि अहिंसा की तरफ एक रुख है, झुकाव है, यद्यपि जो अहिंसात्मक नहीं है बुनियाद में, किन्तु असफल हो गयी। बाईस साल की आजादी की कथा बताती है कि गांधी की क्रांति असफल हो गयी।

गांधी तक की क्रांति असफल हो जाती है, क्योंकि मेरा मानना है कि एक दबाव है, बदलने की तीव्र आकांक्षा है। तो फिर लेनिन और स्टालिन और माओ की क्रांति कैसे सफल हो सकती है! दुनिया प्रतीक्षा करती थी एक क्रांति की, जो क्रांति चेतना की और अहिंसा की क्रांति होती, लेकिन क्रांति की तैयारी में सबसे बड़ी बाधा क्या है? सबसे बड़ी बाधा हिंसा में आस्था है। जिन लोगों की हिंसा में आस्था है वे लोग दुनिया के चित्त को बदलने के अहिंसात्मक विधान में कूदते भी नहीं, विचार भी नहीं करते, चिंता भी नहीं करते। उस दिशा में कोई काम नहीं करते, हमें यह ख्याल ही नहीं है। एक गांव में एक हजार लोग, पचास लाख लोगों में से हजार लोग, भी अगर अहिंसात्मक हों तो पचास लाख लोगों के चित्त में बुनियादी रूपांतरण शुरू हो जायेगा, लेकिन हमें इसका कुछ पता नहीं।

अभी रूस में फयादोव ने एक प्रयोग किया है। फयादोव रूस का एक

मनोवैज्ञानिक विशेषज्ञ है और चूकि प्रयोग रूस में हुआ है इसलिए महत्वपूर्ण है। हिन्दुस्तान में योगी तो बहुत दिन से यह कहता है, लेकिन कोई सुनता नहीं है। हिन्दुस्तान का योगी यह कहता है कि विचार इतनी बड़ी शक्ति है कि अगर कोई विचार किसी व्यक्ति के हृदय में पूर्ण संकल्प से स्थापित हो जाय तो चारों तरफ उस विचार की तरंगें फैलनी शुरू हो जाती हैं और हजारों लोगों को अहिंसा में रूपांतरित कर देती हैं। एक बुद्ध का पैदा होना, एक महावीर का खड़ा होना इतनी बड़ी क्रांति है जिसका कोई हिसाब नहीं, जिसका कि हमें कोई पता नहीं चलता। क्योंकि लाखों लोगों के प्राण-कमल उनकी किरणों से खिलने शुरू हो जाते हैं। फयादोव ने एक प्रयोग किया रूस में विचार-परिभ्रमण का, टैलीपैथी का, विचार को दूर भेजने का। उसने मास्को में बैठकर किसी एक गांव में एक हजार मील दूर विचार का संप्रेषण किया। मास्को में बैठा है फयादोव अपनी लेबोरेटरी में और एक हजार मील दूर किसी गांव के बगीचे में, पब्लिक पार्क में दस नम्बर की बेंच पर एक आदमी बैठा है, उसके पीछे एक भाई छिपकर बैठे हैं। उन्होंने उठाकर फोन किया कि दस नम्बर की बेंच पर एक आदमी आकर बैठा है, आप अपने विचार से प्रभावित करके उसे सुला दें। फयादोव एक हजार मील दूर से कामना करता है अपने मन में कि वह जो आदमी दस नम्बर की बेंच पर बैठा है वह सो जाय, सो जाय, सो जाय! यहां वह पूर्ण संकल्प से, पूर्ण एकाग्र चित्त से कामना करता है। वह आदमी तीन ही मिनट के भीतर वहां बेंच पर आंख बन्द करके सो जाता है। लेकिन हो सकता है, यह संयोग की बात हो। दोपहर में थका मांदा आदमी ऐसे ही सो जाता है। उसने फोन करके कहा कि यह सो गया है जरूर। तुमने कहा, तीन मिनट में सो जाओ तो तीन मिनट में सो गया। लेकिन यह संयोग भी हो सकता है। अब उसे ठीक पांच मिनट के भीतर वापस उठा दो तो समझें। फयादोव यहां से फिर सुझाव भेजता है कि उठो उठो, उठो, जागो, जाग जाओ, ठीक पांच मिनट में जाग जाओ। वह आदमी पांच मिनट मैं आंख खोलकर बैठ जाता है। मित्र उसके पास जाकर पूछते हैं कि आपको कुछ अजीब-सा तो नहीं लगा। वह आदमी कहता है, अजीब-सा से मतलब? मैं जब आया और कुछ काम करने लगा तो जैसे मेरे पूरे प्राण कह रहे हैं कि सो जाओ। में रात अच्छी तरह सोया हूं, थका मांदा नहीं हूं। पूरा व्यक्तित्व कहता है कि सो जाओ। फिर मैं सो गया। लेकिन अभी क्षण भर पहले एक दूर से आवाज आयी कि उठो। एकदम जाग जाओ। मैं बहुत हैरान हुआ कि यह क्या हुआ! तो एक हजार मील दूर भी विचार संक्रमित हो सकता है।

अभी अमरीका की एक प्रयोगशाला में एक और अद्‌भुत प्रयोग हुआ जो मैं आपसे कहना चाहूंगा। वह प्रयोग भी बहुमूल्य है आने वाले भविष्य में। अंतरिक्ष में किये जाने वाले प्रयोग भी इसके मुकाबले कम मूल्य के सिद्ध होंगे। एटम का प्रयोग भी कम मूल्य का सिद्ध होगा। वह प्रयोग बहुत अद्‌भुत है। एक प्रयोगशाला में उन्होंने विचार का चित्र पहली बार लिया था। विचार का चित्र, जो विचार आपके भीतर चलता है उस विचार का, आपका नहीं। एक आदमी को बहुत ठीक से कैमरे के सामने बिठा गया। बहुत ही संवेदनशील फिल्म लगायी गयी है और उस आदमी को कहा गया है कि एक विचार पर सारे चित्त को एकाग्र कर सोचता रहे, बस एक ही चित्र पर सोचता रहे और उस आदमी ने एक ही चित्र पर विचार किया। वह आदमी एक छोटे से चित्र पर अंदर विचार करता रहा और उस चित्र को फोटो की फिल्म के भीतर पकड़ लिया। इसका क्या मतलब ? इसका मतलब है कि विचार में जो चित्र था भीतर, उसका संप्रेषण, उसकी किरणें, उसकी तरंगें बाहर फेंक रही हैं जो कि फोटो की फिल्म पकड़ सकती थी।

क्रांति नहीं—सिर्फ कंधे बदले

अहिंसात्मक क्रांति का क्या अर्थ है ? अहिंसात्मक क्रांति का अर्थ है अहिंसात्मक लोग। थोड़े से भी लोग अहिंसात्मक हों तो उनके व्यक्तित्व से जो अहिंसा की, जो प्रेम की, जो भीतर परिवर्तन की किरणें पहुंचेंगी वे लाखों लोगों के जीवन में क्रांति ले आयेंगी, इसका हमें पता भी नहीं होगा। मेरी मान्यता है है कि मनुष्य जाति अहिंसात्मक क्रांति की प्रतीक्षा कर रही है और यह प्रतीक्षा जारी रहेगी जबतक कि अहिंसात्मक क्रांति नहीं हो जाती है। हम कोई भी हिंसात्मक क्रांति करें उससे कोई भी परिवर्तन नहीं होगा। जैसे कोई आदमी मुर्दे को मरघट ले जाते हैं। मुर्दे को मरघट ले जाते वक्त अर्थी को कंधे पर लेते हैं। रास्ते में एक कंधा थक जाता है तो अर्थी उठाकर दूसरे कंधे पर रख लेते हैं। बस इसी तरह क्रांति में भी फर्क पड़ता है। एक कंधा दुखने लगता है, दूसरे कंधे पर बोझ रख लिया। थोड़ी देर तक राहत मिलती है। फिर बोझ शुरू हो जाता है। दूसरे कंधे पर बोझ शुरू हो जाता है। अबतक जितनी क्रांतियां हुई हैं, वह अबतक बोझ बदले हैं, बोझ मिटाया नहीं, आदमी के समाज को रूपांतरित नहीं किया, आदमी के समाज को पुराने गठन में नया ढंग दे दिया है। फिर जिन्दगी बड़ी गड़बड़ हो गयी, पुरानी जिन्दगी आनी फिर शुरू हो जाती है।

नयी सपन देखती है। रूस में क्रांति हुई। शायद सबसे महत्वपूर्ण क्रांति दुनिया की वही है। रूस की क्रांति ऐसी थी कि वर्ग मिटा दिये जाएंगे, क्लासेस नहीं रहेंगे। वर्ग मिटा दिये गये, निश्चित मिटा दिये गये। अमीर आज ऊंचे नहीं, गरीब आज नीचे नहीं, लेकिन नया वर्ग पैदा हो गया—वह कम्युनिस्ट आफिसर, कम्युनिस्ट पार्टी का आदमी और वह जो आदमी कम्युनिस्ट पार्टी का नहीं है, दो वर्ग पैदा हो गये। अधिकारी, सत्ताधिकारी और सत्तापूर्ण कल था धनिक और आज निर्धन है सत्ताधिकारी, सत्तापूर्ण–उनके बीच दूरी पैदा हुई। वर्ग फिर नये खड़े हो गये। रूस में जो क्रांति हुई उस क्रांति से वर्ग मिटा नहीं, सिर्फ वर्ग बदल गये। पूंजीपति की जगह मैनेजर आ गया। व्यवस्थापकों की क्रांति थी, व्यवस्थापक बदल गये, जहां मालिक था वहां मैनेजर बैठ गया, सत्ताधिकारी बैठ गया। ध्यान रहे, धनी के पास उतनी ताकत कभी नहीं थी जितनी सत्ताधिकारी के पास। धनी के हाथ में लोगों की गर्दन कभी उतनी नहीं थी जितनी कि आज कम्युनिस्ट पार्टी के पास रूस में है। जितनी स्टालिन के पास ताकत थी उतनी बिड़ला के पास थोड़े ही है, न हो सकती है। सत्ता बदल गयी, वर्ग बदल गये, नये वर्ग आ गये, क्रांति मर गयी, क्रांति का कोई अर्थ न हुआ। फिर कंधा बदल गया।

दुनिया में अबतक क्रांति के नाम पर कंधे बदलते रहे हैं। क्या हम कंधे ही बदलते रहेंगे या सचमुच कोई क्रांति करेंगे? अगर क्रांति करनी है तो हिंसा से आस्था छोड़नी ही पड़ेगी, क्योंकि जो आदमी हिंसा करता है वह आदमी जब मालिक हो जाता है तब हिंसा जारी रखता है और उसकी जो हिंसा जारी रहती है और जिस आदमी ने हिंसा की है और उसके हाथ में हिंसा की ताकत है उस आदमी से ज्यादा हम कभी आशा नहीं रख सकते। वह आदमी हिंसा को छोड़ देगा, हिंसा को बदल देगा? वह आदमी वही रहेगा। रूस में जिन लोगों के हाथ में ताकत आयी वे लोग अच्छे थे। क्रांति के पहले सभी लोग अच्छे होते हैं, क्रांति के बाद जब ताकत हाथ में आती है तब पता चलता है कि कौन आदमी अच्छा है, कौन आदमी बुरा है। संभावना इस बात की है कि स्टालिन ने लेनिन को जहर देकर मारा और इस बात की संभावना है कि जितने लोग क्रांति के अग्रणी थे धीरे धीरे करके एक एक मारे गये। मैक्सिको में जाकर ट्राटस्की की हत्या की गयी। जिन लोगों ने क्रांति की थी स्टालिन ने चुन चुन कर एक एक को मारा, क्योंकि अब सत्ता का खिलवाड़ शुरू हो गया। हिन्दुस्तान में कितने अच्छे लोगों ने गांधी के साथ क्रांति की थी, कितने अच्छे और भले

लोग मालूम पड़ते थे, एकदम सफेद धुले हुए मालूम पड़ते थे। तो जब सत्ता हाथ में आयी तो पता चला कि वे लोग बदल गये, वे दूसरे आदमी साबित हुए, वे कपड़े ही सफेद थे, वे आदमी भीतर सफेद नहीं थे। क्या हो गया सत्ता के हाथ में आते ही? सत्ता के हाथ में आते ही भीतर का असली आदमी प्रकट होता है। जबतक हाथ में ताकत नहीं होती तबतक असली आदमी प्रकट नहीं होता। अगर आपके पास पैसे नहीं हैं तो आप फिजूलखर्च हैं, इसका कोई पता नहीं चलता। पैसा हो तो पता चलता है कि फिजूलखर्च हैं या नहीं। अगर आपके हाथ में छुरा हो मारने को तब पता चलेगा कि कि आप हिंसक हैं या नहीं। जब आपके हाथ में ताकत नहीं है तब तो सभी लोग अहिंसक होते हैं। अहिंसक का पता चलता है अवसर मिलने पर, हिंसा का अवसर मिलने पर। जिन लोगों के हाथ में इस मुल्क की ताकत गयी, ताकत जाने के बाद ही पता चला कि उनके असली तत्व क्या थे। तो जिन लोगों के हाथ में ताकत जायगी अगर वे हिंसा के द्वारा ताकत को पहुंचे हैं तब तो उनकी तस्वीर पहले से ही हिंसा की है, और बाद में उनकी क्या हालत होगी? अहिंसकों की हालत क्या हो जाती होगी? नहीं, हिंसा से कोई क्रांति नहीं हो सकती, सिर्फ बोझ बदल जाते हैं, सिर्फ शकल बदल जाती है, नाम बदल जाते हैं, समाज पुराना का पुराना ही जारी रहता है। पांच हजार वर्ष के लंबे प्रयोगों के बाद भी हमें दिखायी पड़ता है कि हिंसा से कोई क्रांति नहीं हो सकी, आगे भी नहीं हो सकेगी। और अगर आदमी हिंसा से जाग जाय कि हिंसा से कुछ भी नहीं हो सकता, दबाव से कुछ भी नहीं हो सकता— आदमी की आत्मा प्रेम चाहती है और आदमी की आत्मा रूपांतरित होना चाहती है, लेकिन उन लोगों के द्वारा जो रूपांतरित करने के लिए उत्सुक, आतुर नहीं हैं, जिनका कोई आग्रह नहीं है, जो जीते हुए सत्य हैं, जो जीते हुए प्रेम हैं और उनके जीने के कारण दूसरे में फैलते हैं, उनसे रूपांतरण होता है। ऐसे रूपांतरण की प्रतीक्षा मनुष्यता को है। ऐसी क्रांति अहिंसात्मक ही हो सकती है। यह बहुत स्पष्ट रूप से मेरी बात समझ लेनी जरूरी है। मैं हिंसा के बिल्कुल विरोध में हूं। हिंसा के कौन पक्ष में हो सकता है? कौन बुद्धिमान, कौन विचारशील व्यक्ति हिंसा के पक्ष में हो सकता है? हिंसा के पक्ष में होने का मतलब है आदमी में बुद्धि नहीं है क्योंकि लाठी पर वे ही लोग उतरते हैं जिनके पास बुद्धि नहीं होती है। जिनके पास बुद्धि होती है उन्हें लाठी पर उतरने की जरूरत नहीं पड़ती। जो लोग भी हाथ की ताकत में और तलवार की ताकत में विश्वास करते हैं वे मनुष्य से नीचे दर्जे के मनुष्य हैं, उनके भीतर पापी मौजूद है, जो पशु की हिंसा में विश्वास करता है। आदमी हिंसा

में कैसे विश्वास कर सकता है ! पशुओं के हाथ में बहुत बार सत्ता दी गयी है और आदमी ने हर बार भोगा है । आगे भी पशुओं के हाथ में सत्ता नहीं जानी चाहिए, पाशविक हाथों में, हिंसात्मक हाथों में सत्ता नहीं जानी चाहिए। इसलिए आदमी जितना सजग हो, जितना अहिंसा के सार को समझे, जितना अहिंसा के रहस्य को समझे उतना अच्छा है । अहिंसा का सार है, एक शब्द में प्रेम, शुद्ध प्रेम । अहिंसा शब्द बहुत गलत है, क्योंकि नकारात्मक है । उससे पता चलता है हिंसा का । वह शब्द अच्छा नहीं है । शब्द है वास्तविक—प्रेम । क्योंकि प्रेम पोजीटिव है, प्रेम विधायक है । जब हम कहते हैं अहिंसा, तो उससे मतलब है हिंसा नहीं करेंगे । लेकिन हिंसा नहीं करनी है इससे यह सिद्ध नहीं होता है कि प्रेम करना है । हिन्दुस्तान में ऐसे लोगों की लंबी कतार है । वह सब अहिंसा को मानते हैं । इनकी अहिंसा का मतलब है पानी छानकर पीना है । उनकी अहिंसा का मतलब है रात खाना नहीं खाना है । उनकी अहिंसा का मतलब है किसी को चोट नहीं पहुंचाना है । लेकिन ऐसी अहिंसा बड़ी हिंसक है जो सिर्फ दूसरे को दुख पहुंचाने से बचती है । असली अहिंसा वही है जो दूसरे को सुख पहुंचाना चाहती है। दूसरे को दुःख नहीं पहुंचाना है, यह काफी नहीं है । वह बहुत लचर, अधकचरी अहिंसा है । दूसरे को सुख पहुचाना है और क्यों पहुंचाना है ? दूसरे को सुख इसलिए कि मोक्ष जाना है, इसलिए कि स्वर्ग पाना है । जो आदमी दूसरे को इसलिए दुःख नहीं दे पाता है क्योंकि स्वर्ग जाना है, मोक्ष जाना है वह आदमी हद दर्जे का बेईमान है, वह आदमी हद दर्जे का पापी है, उस आदमी को दूसरे से कोई मतलब नहीं है । वह दूसरे को सीढ़ियां बना रहा है अपने स्वर्ग जाने की ।

मैंने सुना है, चीन के एक गांव में एक बहुत बड़ा मेला लगा हुआ था । एक कुआं था मेले के पास जिसपर पाट नहीं था और एक आदमी भूल से उस कुएं के भीतर गिर गया । वह आदमी जोर जोर से चिल्लाने लगा । किन्तु मेले में बहुत भीड़ थी, कौन उसकी सुनता ! एक बौद्ध भिक्षु कुएं के पास पानी पीने को रुका । नीचे से आदमी चिल्लाया कि भिक्षु जी, मुझे बचाइए । उस भिक्षु ने कहा, पागल ! किस किस को बचाया जा सकता है, सारा संसार कुएं में पड़ा है । जीवन ही दुःख है । भगवान ने कहा है, जीवन दुःख का मूल है । हम सभी डूब मरेंगे, हम किसको बचा सकते हैं ! उस आदमी ने कहा, ज्ञान की बातें, पहले मुझे निकाल लें, फिर पीछे करना, क्योंकि ज्ञान की बातें कुएं में गिरे आदमी को अच्छी नहीं मालूम पड़तीं । कृपा करो, मुझे बाहर निकालो । भिक्षु ने कहा, पागल ! कौन किसको निकाल सकता है । अपना ही अपना संभाल ले आदमी तो काफी है, क्योंकि भगवान ने कहा है,

कोई किसी का सहारा नहीं है, अपने सहारे रहो। उसने कहा, वह मैं समझता हूँ लेकिन अभी मैं अपना सहारा ढूंढ़ रहा हूँ। तैरना नहीं जानता हूँ। मुझे किसी तरह बाहर निकाल लो तो तुम्हारा शास्त्र भी सुनूंगा, तुम्हारा प्रवचन भी सुनूंगा। उस भिक्षु ने कहा, शायद तुम्हें पता नहीं कि भगवान ने शास्त्र में यह भी कहा है कि अगर मैं तुझे बचा लूं और कल तू हत्या कर दे, चोरी कर ले तो मैं भी तेरे कर्म का भागी हो जाऊंगा। मैं अपने रास्ते पर, तू अपने रास्ते पर। भगवान तेरा भला करे। वह भिक्षु चला गया। शास्त्रों को मानने वाले लोग कितने खतरनाक होते हैं। उनका शास्त्र ही महत्वपूर्ण है, मरता हुआ आदमी ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं है। उसके पीछे ही कंफ्युशस को माननेवाला एक दूसरा भिक्षु आकर रुका। उसने भी नीचे झांक कर देखा। वह आदमी चिल्लाया कि मुझे बचाओ, मैं मर रहा हूँ। बुरी मेरी स्थिति है, सांसे टूटी जाती हैं, हिम्मत नहीं रखी जाती है। कंफ्युशस के शिष्य ने कहा, देख, तेरे गिरने से साबित हो गया कि कंफ्युशस ने जो लिखा है वह सही है। उसने लिखा है कि हर कुएं पर पाट होनी चाहिए और जिस कुएं पर पाट नहीं होगी और जिस राज्य में कुएं पर पाट नहीं होती वह राज्य ठीक नहीं है। तू घबरा मत, हम आंदोलन करेंगे और कुएं पर पाट बनवाकर रहेंगे। उस आदमी ने कहा कि जब बनेगा तब बनेगा, मैं तो गया। आंदोलन करनेवाले को आदमी से कोई मतलब नहीं है। उन्हें आंदोलन से मतलब है। वे आंदोलन करेंगे। और वह जो आदमी डूब रहा है वह गया। वह बहुत चिल्लाया लेकिन आन्दोलनकारी किसी की सुनते हैं? वह जाकर मंच पर खड़ा हो गया और मेले में लोगों को समझाने लगा कि देखो, कंफ्युशस ने जो लिखा है, ठीक लिखा है। सबूत? वह कुआं सबूत है। हर कुएं पर पाट होना चाहिए। जबतक कुएं पर पाट नहीं है तबतक राज्य सुराज्य नहीं है। उसके पीछे ही एक ईसाई मिशनरी वहां आया। उसने भी झांककर देखा। वह आदमी चिल्ला भी नहीं पाया कि उसने अपनी झोली से रस्सी निकाली और कुएं में डाली और कुएं के नीचे गया। उस आदमी को निकाल कर बाहर लाया। उस आदमी ने कहा, आप ही एक भले आदमी मालूम पड़ते हैं। लेकिन आश्चर्य कि आप झोली में रस्सी पहले से ही रखे हुए थे। उसने कहा, हम सब इन्तजाम करके निकलते हैं क्योंकि सेवा ही हमारा कार्य है और हमें पहले से पता रहता है कि कोई न कोई तो कुएं में गिरेगा और जीसस ने कहा है कि अगर मोक्ष जाना है, अगर स्वर्ग का राज्य पाना है तो लोगों की सेवा करो। सेवा के बिना कोई मोक्ष नहीं जा सकता है। हम मोक्ष की खोज कर रहे हैं। तुमने बड़ी कृपा की जो कुएं में गिरे। अपने बच्चों को भी समझा जाना ताकि वे कुएं में गिरते रहें और

हमारे बच्चे उनको निकालते रहें ;

यह जो आदमी है, यह जो मोक्ष में जाने के लिए लोगों के कुएं में गिरने की प्रतीक्षा कर रहा है, यह आदमी हद दर्जे का पापी है । इन्हें न कोढ़ियों से मतलब है, न बीमारों से । ये सबको सीढ़ियां बनाकर अपना मोक्ष खोज रहे हैं । यह आज तक जो लोग अहिंसा की बात करते रहे हैं उनके लिए अहिंसा भी एक सीढ़ी है । नहीं, अहिंसा जो सीढ़ी बनती है वह अहिंसा नहीं है । अहिंसा शब्द ठीक नहीं है । शब्द तो ठीक है प्रेम, ज्वलंत प्रेम और प्रेम का मतलब है दूसरे को सुख देने की कामना । लेकिन क्यों ? इसलिए नहीं कि मोक्ष जायेंगे, इसलिए नहीं कि पुण्य होगा, बल्कि सिर्फ इसलिए कि जो आदमी जितना दूसरे को सुख दे पाता है उतना ही प्रतिक्षण सुखी हो जाता है, तत्क्षण, आगे पीछे नहीं, कभी भविष्य में नहीं । जो आदमी जितना दूसरे को दुःख देता है तत्क्षण उतना ही दुखी हो जाता है । जीवन में जो हम दूसरे के लिए करते हैं वही हम पर वापस लौट आता है । जिन्दगी एक बड़ी प्रतिध्वनि है, एक इको प्वाइंट है ।

मैं एक पहाड़ पर गया था । कुछ मित्र मेरे साथ थे । उस पहाड़ पर एक इको प्वाइंट था जहां आवाज की जाती तो वापस लौटती थी हम लोगों के बीच । वहां पहाड़ में जो मित्र थे कुत्ते की आवाज करने लगे । सारा पहाड़ कुत्तों की आवाज से गूंज गया । मैंने उनसे कहा, रुको भी । अगर आवाज ही करनी है तो कोयल की करो या कोई गीत गाओ । कुत्ते की करने से क्या फायदा ? वह मित्र गीत गाने लगे प्रेम का । उन्होंने कोयल की आवाज की और पहाड़ियां कोयल की आवाज से गूंज गयीं । फिर हम लौटे तो वह मित्र कुछ सोचने लगे और उदास हो गये और रास्ते में कहने लगे कि कहीं ऐसा तो नहीं कि आपने इशारा किया हो कि यह जो घाटी है, वह जो इको प्वाइंट है, वह भी प्रतीक है जिन्दगी का । जिन्दगी में भी कुत्ते की जो आवाज फेंकता है, चारों तरफ कुत्ते उसके भौंकने लगते हैं । जिन्दगी में भी जो गीत गाता है चारों तरफ गीत की शहनाइयां बजने लगती हैं । जिन्दगी में जो हम फेंकते हैं जिन्दगी की तरफ वही हम पर वापस लौटना शुरू हो जाता है – हजार हजार गुना होकर । प्रेम जो जितना बांटता है उतना प्रतिध्वनित होकर उसके ऊपर बरसने लगता है ।

एक छोटी सी कहानी और अपनी बात मैं पूरी कर दूंगा । रवीन्द्रनाथ ने एक गीत लिखा है । बहुत प्यारा गीत है और उस गीत में लिखा है कि एक भिखमंगा सुबह उठा है भीख मांगने के लिए । अपनी झोली निकालकर कंधे पर डाली है । आज त्यौहार का दिन है और भीख मिलने की आशा है । ऐसा मालूम होता है कि त्यौहारों

की ईजाद भिखमंगों ने ही की होगी, क्योंकि खोज उन्होंने की होगी। झोली कंधे पर डालकर उसने अपनी पत्नी से कुछ अनाज या चावल के दाने झोली में डालने को कहा। (जब भी कोई भिखमंगा अपने घर से निकलता है, चालाक भिखमंगा, क्योंकि भिखमंगों में भी नासमझ भिखमंगे होते हैं, समझदार भी होते हैं। सब तरह की दूकानों में समझदार, नासमझ सभी तरह के लोग होते हैं। भिखमंगों की भी एक दूकान है) उसने कुछ दाने घर से डाल लिए हैं और भिखमंगे कुछ दाने डालकर निकलते हैं ताकि जिसके सामने झोली फैलायें उसे दिखायी पड़े कि भीख पहले भी दी जा चुकी है। इन्कार करने में मुश्किल होती है अगर भीख पहले दी जा चुकी हो क्योंकि अहंकार को चोट लगती है कि किसी दूसरे आदमी ने दान कर दिया है और अगर हम नहीं करते हैं तो उस आदमी के सामने छोटे हो जाते हैं। इसलिए भिखमंगे पैसे हाथ में बजाते हुए निकलते हैं। वह भिखमंगा रास्ते पर, राजपथ पर जाकर खड़ा ही हुआ था, कुछ सोचता था कि किस दिशा में जाऊं, कि देखा कि सामने से सूरज निकलता है और राजा का स्वर्ण रथ आ रहा है। राजा अपने रथ पर सवार है। सूरज की किरणों में उसका रथ चमक रहा है। भिखमंगे के तो भाग्य खुल गये। उसने कभी राजा से भीख नहीं मांगी थी। राजाओं से भीख मांगना मुश्किल है, क्योंकि द्वार पर पहरेदार होते हैं, वे भीतर प्रवेश करने नहीं देते। आज तो राजा रास्ते पर मिल गया है, आज तो झोली फैला दूंगा और भीख से छुटकारा जन्म जन्म के लिए मिल जायगा। फिर आगे भीख नहीं मांगनी पड़ेगी। इसी सपने में, कल्पना में था और भिखमंगों के पास सिवाय सपने के और कुछ भी नहीं होता। सपने में ही जीना पड़ता है क्योंकि जिनके पास कुछ भी नहीं है वे सपने में ही जीने का रास्ता खोज लेते हैं। वह महलों में निवास करने लगा सपने में और तभी रथ आकर खड़ा हो गया। सारे सपने टूट गये और हैरान हो गया भिखारी। राजा नीचे उतरा और राजा ने अपनी झोली भिखारी के सामने फैला दी। भिखारी ने कहा, क्या कर दिया? राजा ने कहा, क्षमा करना, अशोभन तो है लेकिन ज्योतिषियों ने कहा है कि राज्य पर खतरा है दुश्मन का और कहा है कि अगर मैं आज त्यौहार के दिन जो पहला आदमी मुझे मिल जाय उससे भीख मांग लूं, तो राज्य बच सकता है। तुम्हीं पहले आदमी हो। दुखी न हो। तुमने कभी भिक्षा दी न होगी इसलिए बड़ी मुश्किल पड़ेगी देने में, लेकिन कुछ भी थोड़ा सा दे दो, इन्कार मत कर देना, पूरे राज्य के भाग्य का सवाल है। भिखमंगा कितनी कठिनाई में पड़ गया होगा? उसने हमेशा मांगा था, दिया कभी नहीं था। देने की आदत न थी। झोली में हाथ डालता और खाली हाथ बाहर निकाल लेता है। इन्कार भी कर नहीं सकता। सामने राजा खड़ा है। पूरे राज्य के संकट का सवाल है। हाथ भीतर चला जाता है, मुट्ठी बंधती नहीं। राजा कहता है,

इन्कार मत कर देना क्योंकि ज्योतिषियों ने कहा है कि अगर पहले आदमी ने इन्कार कर दिया तो संकट निश्चित है। तो एक दाना ही दे दो। भिखारी ने बमुश्किल एक चावल का दाना निकाल कर राजा की झोली में डाल दिया। राजा अपने रथ पर बैठा और चला गया। धूल उड़ती रह गयी। भिखारी के सब कपड़े धूल से भर गये। उल्टा मिला तो कुछ भी नहीं. पास से कुछ चला गया। उसका दुःख आप जानते हैं? दिन भर भीख मांगी, बहुत मिली उस दिन भीख। इतनी कभी नहीं मिली, लेकिन मन प्रसन्न नहीं हुआ, क्योंकि जो मिलता है उससे प्रसन्न नहीं होता है मन। जो छूट जाता है उससे दुखी होता है। एक दाना खटकता रहा जो दिया था। सबके मन की यही हालत है क्योंकि सब छोटे-मोटे भिखारी हैं। जो छूट जाता है वह खटकता रहता है। जो मिल जाता है उसका पता नहीं चलता—भिखारी के मन का लक्षण यह है। जो मिल जाय उसका पता न चले, जो न मिले, जो छूट जाय उसकी पीड़ा सालती रहे। वह घर पहुंचा है। उसने झोली पटक दी। पत्नी तो पागल हो गयी। इतना कभी न मिला था। झोली खोलने लगी। पति तो उदास था। पत्नी ने कारण पूछा। पति ने कहा, तुझे पता नहीं है पागल! झोली में थोड़ा कम है। आज थोड़ा देना भी पड़ा है। ऐसा जिन्दगी में कभी नहीं किया, आज वह करना पड़ा। पत्नी ने झोली खोली, दाने बिखर गये और पति छाती पीटकर रोने लगा। अब उसकी आंखों से आंसुओं की धारा बहने लगी। पत्नी ने पूछा, क्या हुआ? पति ने नीचे के दाने उठाये और एक दाना सोने का हो गया था! एक चावल का दाना सोने का हो गया था! चिल्लाने लगा कि भूल हो गयी, अवसर निकल गया। मैंने अगर सारे दाने दे दिये होते तो सब सोना हो गया होता! लेकिन अब कहां खोजूं उस राजा को, कहां मिलेगा वह रथ! अवसर चूक गया है वह।

मुझे पता नहीं, यह कहानी कहां तक सच है, लेकिन यह मुझे पता है कि जिन्दगी के अंत में आदमी ने जो दिया है वही सोने का होकर वापस लौट आता है। जो दिया है वही स्वर्ण का हो जाता है, जो रोक लिया है वही मिट्टी का हो जाता है। प्रेम का अर्थ है दान, प्रेम का अर्थ है बांटना। जितना बंट जाता है व्यक्तित्व, आत्मा उतनी ही स्वर्ण की हो जाती है, जितना अनबंटा रह जाता है व्यक्तित्व, आत्मा उतनी ही मिट्टी हो जाती है। ●●●

जिसकी प्यास हीरों की हो उसे कंकड़-पत्थरों से तृप्त नहीं किया जा सकता।

समाचार विभाग:

धर्मचक्र प्रवर्तन

आचार्यश्री के देशव्यापी कार्यक्रम

"धर्म है— एक-एक व्यक्ति की स्वयं की खोज – संगठन से उसका कोई संबंध नहीं।"

जमशेदपुर में त्रिदिवसीय सत्संग

जमशेदपुर में आचार्य श्री की काफी समय से प्रतीक्षा थी। और जब ५,६ एवं ७ जुलाई को आचार्य श्री का यहाँ आना हुआ तो जिज्ञासुओं एवं साधकों में खुशी की लहर दौड़ गई। यहाँ पर प्रतिदिन आचार्य श्री के प्रवचनों को सुनने के लिए प्रबुद्ध नागरिकों में बहुत उत्सुकता देखी गई। आचार्य श्री ने कहा: "धर्म व्यक्ति के जीवन की खोज है। और धर्म के नाम पर मैं मनुष्य को अधर्म में डूबे हुए देखता हूँ। धर्म का भीड़ से, संगठन से दूर का भी संबंध नहीं है। धर्म तो केवल बस धर्म है– हिंदू, मुसलमान, बौद्ध, जैन होने से उसका कोई अर्थ नहीं है।"

★

"अनुयायी तृतीय कोटि का व्यक्ति होता है। प्रथम कोटि का व्यक्ति तो स्वयं अपना मार्ग निर्मित करता है।"

बंबई जूनियर चेम्बर में आचार्यश्री का उद्‌बोधन

दिनांक १९ जुलाई की संध्या को आचार्य श्री ने बंबई जूनियर चेम्बर में "गांधीवादी कहाँ हैं ?" विषय पर मौलिक अभिव्यक्ति दी। आचार्य श्री ने कहा : "वाद और सिद्धांतों को पकड़ना जड़ व्यक्ति का लक्षण है। और अनुयायी इस तरह के

सिद्धांतों को पकड़कर केवल अपने जड़ होने का परिचय देता है। गांधीजी के समय में जो व्यक्ति उनके निकट आये, उन्होंने गांधीजी के प्रभाव में गांधीजी के सिद्धांतों का पालन किया लेकिन बाद में जैसे ही सत्ता सामने आयी कि उन व्यक्तियों के सारे सिद्धांत टूट गये और उनका जो असली व्यक्तित्व था, वह उभरकर सामने आया। मेरा देखना है कि भारत ने एक बहुत बड़ी भूल अतीत में की है, वह है किसी भी महात्मा के प्रभाव में जो व्यक्ति आए; उनको अच्छा मान लेने की। महात्मा के प्रभाव में होने से उन व्यक्तियों की चेतना तो परिवर्तित होती नहीं, केवल एक भ्रम हो जाता है उनके अच्छे होने का। और जैसे ही महात्मा का प्रभाव जाता है, वे सारे अनुयायी एकदम साधारण व्यक्ति साबित होते हैं।

मैं कहता हूँ कि अनुयायी तो केवल तृतीय कोटि का व्यक्ति होता है– प्रथम कोटि का व्यक्ति तो स्वयं अपना मार्ग चुनता है, वह कोई वाद तथा सिद्धांतों में नहीं पड़ता। और भारत को अब यह भूल छोड़नी चाहिए महात्मा के अनुयायियों को अच्छा मान लेने की।

इससे मैं नहीं कहना चाहता कि गांधीवादी कहाँ हैं ? वे वहीं हैं, जहाँ हो सकते हैं।"

★

"सत्य है अज्ञात, विचार अज्ञात को नहीं जान सकते हैं। उसे जानने का द्वार तो निर्विचार चेतना है।"

मद्रास में सत्संग

दिनांक २०, २१ एवं २२ जुलाई को आचार्य श्री का आगमन नगर के जिज्ञासु साधकों के आमंत्रण पर मद्रास में हुआ। यहाँ प्रेमी नागरिकों में आचार्य श्री के आगमन से एक नई लहर व्याप्त हो गई। आचार्य श्री ने कहा: "विचार से सत्य नहीं जाना जा सकता है। सत्य है अज्ञात और सत्य को सोचा कैसे जा सकता है ? अज्ञात को जानने के लिए तो ज्ञात को छोड़ देना अत्यंत आवश्यक है। जहाँ ज्ञात नहीं है, वहीं अज्ञात का प्रवेश है। विचार ज्ञात हैं। इसलिए विचारों में नहीं, निर्विचार में सत्य उपलब्ध होता है।"

★

"सत्य है अनंत और इससे वह शून्य में जाकर ही जाना जा सकता है।"

सिने कलाकारों के मध्य

बंबई में आचार्य श्री से कल्याणजी आनंदजी के निवास पर २३ जुलाई को सिने कलाकारों ने भेंट ली। यह भेंट बहुत रसपूर्ण तथा आनंददायी रही। यहाँ पर आचार्य

श्री ने कहा : "जीवन है अनंत । उसे कहीं भी नहीं बांधा जा सकता है । किसी भी लीक पर खड़ा नहीं किया जा सकता है । उसे तो अनंत जानने की दिशा में ही ले जाया जा सकता है– तभी व्यक्ति जीवन से परिचित होता है । यह संभव है शून्य में छलांग लगाने से । शून्य में जाकर ही व्यक्ति को जो उपलब्ध होता है, वह व्यक्ति चेतना को अनंत रहस्य का द्वार खोल देता है ।"

★

"सत्य है अमूर्त । उसे मूर्त कर, सत्य की झलक देना — कलाकार की अभिव्यंजना है ।"

बंबई जहांगीर आर्ट गैलरी में चित्रकारों के बीच :

दिनांक २४ जुलाई को जहाँगीर आर्ट गैलरी में चित्रकारों ने आचार्य श्री को आमंत्रित किया । आचार्य श्री मध्यान्ह में यहाँ पधारे । उपस्थित चित्रकारों को संबोधित करते हुए आचार्य श्री ने कहा : "कलाकार, चित्रकार जीवन के अज्ञात को जानकर ही श्रेष्ठतम अभिव्यक्ति कर सकता है । ज्ञात की लीक पर चलकर कुछ भी प्राणों का चित्रण नहीं किया जा सकता है । प्राण जब अज्ञात सागर को छूते हैं– तभी उस अमूर्त सत्य की झलक कलाकार जगत के तल पर देता है ।"

★

"भारत में समाजवाद की सही दिशा — छोटी छोटी इकाईयों के माध्यम से मिलकियत वितरण कर देश में स्वस्थ समाजवाद लाया जा सकता है ।"

शहीद स्मारक भवन, जबलपुर में :

जबलपुर नगर का यह सौभाग्य है कि प्रतिमाह पूज्य आचार्य श्री के मौलिक सृजनात्मक विचारों को उसे सुनने का अवसर मिलता है । "भारत और समाजवाद" विषय पर दिनांक २७ जुलाई की रात्रि विशाल सभा को संबोधित करते हुए आचार्य श्री ने कहा : "समाजवाद एक आदर्श है—उसे होना चाहिए । लेकिन भारत में जिन दिशाओं से समाजवाद लाने की बात चलती है—वह दिशा भ्रमित है । उससे तो केवल व्यक्ति के हाथों से सत्ता छीनकर राज्य के हाथों में सत्ता देना है । व्यक्ति शक्तिशाली न होकर राज्य शक्तिशाली हो जायेगा । मैं ऐसे समाजवाद को पसंद नहीं करता। मैं चाहता हूँ कि छोटी-छोटी इकाईयों में धन के उत्पादन की व्यवस्था रहे । इन इकाईयों में परस्पर प्रतिद्वंद्विता भी रहे, ताकि पूंजीवाद के स्वस्थ गुण विद्यमान रह सकें और धन का केन्द्रीकरण किसी व्यक्ति तथा सत्ता का केन्द्रीकरण राज्य के हाथों में

न रह सके। सत्ता और धन छोटी-छोटी इकाइयों में रहे, तभी समाजवाद का सही विकास अपने देश में हो सकता है।"

★

"किसी बड़े मसले को जब तक राष्ट्र में नहीं पैदा किया जाता, तब तक राष्ट्रीय एकता संभव नहीं।"

रोटरी क्लब, जबलपुर में वार्त्ता :

दिनांक ३० जुलाई को आचार्य श्री की एक वार्त्ता रोटरी क्लब जबलपुर में आयोजित हुई। नगर के प्रबुद्ध वर्गों के व्यक्तियों ने बड़ी संख्या में उपस्थित होकर आचार्य श्री को सुना। आचार्य श्री का मौलिक चिन्तन और सृजनात्मक जीवन दृष्टि से प्रबुद्ध वर्ग बहुत प्रभावित हुआ। आचार्य श्री ने कहा : "राष्ट्र की धारणा भारत में विकसित नहीं हुई, कारण कि भारत हमेशा से परलोक में खोया रहा है। देशवासियों को जब तक इस जीवन को स्वर्ग बनाने की धारणा नहीं दी जाती और भौतिक समृद्धि के आधार नहीं रखे जाते, तब तक भारत में राष्ट्रीय जीवन का विकास नहीं हो सकता।"

आचार्य श्री ने आगे कहा : "मुल्क की चेतना जागती है किसी बड़े मसले से। जब तक देश आजाद नहीं था, आजादी का बड़ा सवाल था। और देश एक जुट खड़ा हो सका— आजादी के लिए। आज आजादी के २२ वर्ष बाद देश में हमने कोई बड़े मसले खड़े नहीं किए — टुच्चे, दौ-कौड़ी के मसले पर देशवासी आपस में लड़ते रहे। मेरा देखना है कि राष्ट्रीय एकता तभी संभव है कि जब देश में बड़ी समस्यायें हों।"

★

"मनुष्य को अपने प्रति वैज्ञानिक समझ का विकास करना नितांत आवश्यक है, तभी स्वस्थ मनुष्यता जन्म पा सकेगी।"

दिल्ली में विचार-गोष्ठी :

पूज्य आचार्य श्री के सान्निध्य में २ अगस्त को एक विचार गोष्ठी का आयोजन लाला सुंदरलाल जी के निवास स्थान पर हुआ। गोष्ठी में दिल्ली नगर के प्रबुद्ध नागरिकों ने भाग लिया। आचार्य श्री ने कहा : "मनुष्य का इतिहास घृणा का और युद्ध का रहा है। अभी तक मनुष्य ने अपने प्रति वैज्ञानिक समझ का विकास नहीं किया है। जिस दिन मनुष्य अपने प्रति वैज्ञानिक समझ का विकास करेगा— उस दिन दुनिया में इतनी शक्ति और ऊर्जा का जन्म होगा जिससे कि सारी मानव जाति आनंद के लोक में प्रतिष्ठा पा सकेगी।"

★

"जीवन क्या है ? परमात्मा क्या है ? आनन्द क्या है ? इन सारे प्रश्नों का समाधान एक ही शब्द में है। और वह शब्द है : प्रेम।"

लुधियाना में अपूर्व सत्संग :

पंजाब के जन-मानस में पूज्य आचार्य श्री की वाणी ने चिन्तन और मनन के नये द्वार खोले हैं। लोगों में अपूर्व उत्सुकता आचार्य श्री के विचारों के प्रति जागी है। इस उत्सुकता को लुधियाना के प्रवचनों में जाना जा सकता है। आचार्य श्री जब यहाँ ३, ४ एवं ५ अगस्त के त्रिदिवसीय सत्संग हेतु पधारे तो ३०-३५ हजार नागरिकों ने उपस्थित होकर आचार्य श्री की अमृतवाणी को सुना। आचार्य श्री ने यहाँ कहा : "प्रेम, प्रेम और प्रेम। यही मेरा संदेश है। प्रेम के प्रकाश में ही जीवन प्रभु की यात्रा बनता है। और प्रेम की वर्षा में ही जीवन का बीज अंकुरित होता है। और प्रेम की चुनौती में ही वह सब जो व्यक्ति में छिपा है, प्रकट होता है। फिर, प्रेम ही सौन्दर्य है और प्रेम ही आनंद है। इसलिए प्रेम में जियो। प्रेम ही हो जाओ। प्रेम ही श्वास हो.... प्रेम ही प्यास हो. . . . . प्रेम ही प्राण हो। और तब तुम अपने आप पा जाओगे कि जीवन क्या है ?"

★

"मनुष्य अपनी शक्तियों से परिचित होकर, जीवन के गहरे में प्रतिष्ठित हो सकता है"

बड़ौदा में विशाल सत्संग :

गुजरात के कोने-कोने में आचार्य श्री की वाणी चारों ओर परिव्याप्त हो गई है। बड़ौदा में इस बार आचार्य श्री जब १४, १५, १६ एवं १७ अगस्त को पहुँचे तो काफी बड़ी तादाद में श्रोताओं ने उपस्थित होकर आचार्य श्री की वाणी को सुना। आचार्य श्री ने यहाँ कहा : "मनुष्य अपनी शक्तियों का दमन करके कभी भी जीवन में शांति और आनंद को उपलब्ध नहीं हो सकता। शक्तियों का दमन नहीं– शक्तियों का पूर्ण परिचय पाकर उनके सम्यक् प्रयोग से व्यक्ति जीवन के श्रेष्ठतम अनुभवों को जानकर – व्यक्तित्व की गहराई में प्रतिष्ठित हो सकता है।"

★

"सत्य एक है, असत्य अनेक हैं। धर्म भी एक है। अधर्म जरूर अनेक हो सकते हैं।"

अहमदाबाद में त्रिदिवसीय सत्संग :

अहमदाबाद में आचार्य श्री की सृजनात्मक क्रांतिकारी वाणी को सुनन के लिए अपूर्व उत्साह नागरिकों में है। प्रवचन को सुनने के लिए बहुत बड़ी संख्या में नागरिक-गण उपस्थित होते हैं। दिनांक १८,१९ एवं २० अगस्त को यहाँ प्रतिदिन सुबह-शाम

प्रवचन आयोजित हुये तथा मध्यान्ह में अध्यापकों तथा विद्यार्थियों के मध्य कार्यक्रम हुये। यहाँ पर उन्होंने कहा : "मैं एक ही बात यहाँ करने आया हूँ कि तुम यदि धर्म में प्रवेश चाहते हो तो धर्मों से बचना। क्योंकि धर्मों ने ही धर्म की हत्या कर दी है। सत्य एक है और एक ही हो सकता है। असत्य जरूर अनेक हो सकते हैं। धर्म भी एक ही है। अधर्म जरूर अनेक हैं। उस एक धर्म का कोई भी नाम नहीं है। क्योंकि "एक" का कोई नाम हो ही कैसे सकता है. . . . वह तो अनाम है। लेकिन वह प्रत्येक में छिपा बैठा है और जो भी अपने भीतर आ जाता है, वह उसके मंदिर में प्रविष्ट हो जाता है। आह! उसका मंदिर स्वयं के अतिरिक्त और कहीं भी नहीं है।"

★

"विज्ञान ने मनुष्य के सारे अंधविश्वास तोड़ दिए हैं— और बहुत बड़ी शक्ति को जन्म दिया है। लेकिन विज्ञान की शक्तियों का सही उपयोग तभी संभव है जब व्यक्ति चेतना शांति में प्रतिष्ठित हो।"

शहीद स्मारक भवन, जबलपुर में :

दिनांक २४ अगस्त को आचार्य श्री ने शहीद-स्मारक भवन जबलपुर में "विज्ञान और मनुष्य के भविष्य" पर एक वार्त्ता दी। युवकों, विद्यार्थियों और प्रबुद्ध नागरिकों की इस महती सभा को संबोधित करते हुए आचार्य श्री ने कहा : "विज्ञान ने बहुत से मनुष्य के अंधविश्वास तोड़ दिये हैं। यह बहुत शुभ है। और पहली बार व्यक्ति के सामने अपार शक्ति के स्रोत विज्ञान ने खोल दिए हैं। लेकिन यह शक्ति अपने आप में बहुत विनाशकारी हो सकती है— कारण कि शक्ति का सृजनात्मक उपयोग तभी संभव है जबकि व्यक्ति चेतना शांति में प्रतिष्ठित हो।"

★

"जन्म ही जीवन नहीं है। बीज ही वृक्ष नहीं है। बीज को वृक्ष बनना है। जन्म को जीवन बनना है। और तभी कृतार्थता उपलब्ध होती है।"

गाडरवारा में विचार गोष्ठी :

२७, २८ अगस्त को आचार्य श्री गाडरवारा पधारे। यहाँ पर दोनों दिवस मध्यान्ह में विचार गोष्ठियों का आयोजन किया गया जिसमें बस्ती के प्रमुख व्यक्तियों ने भाग लिया। आचार्य श्री ने यहाँ कहा : "बीज की सार्थकता बीज में ही नहीं है। वरन उन फूलों और फलों में है जो कि वह बन सकता है। और यही जीवन के संबंध में भी सत्य है। इसलिए जो जन्म को जीवन समझ लेता है वह भूल में पड़ जाता है। जन्म ही जीवन नहीं है। बीज ही वृक्ष नहीं है।"

"पृथ्वी नर्क बन गई है. . . . क्यों ? अच्छे लोगों की पलायन वृत्ति से । और पृथ्वी स्वर्ग भी बन सकती है, उनकी जीवन के प्रति प्रतिबद्धता से ।"

पूना जीवन जागृति केंद्र द्वारा आयोजित सत्संग में :

१०, ११, १२ एवं १३ सितंबर को आचार्य श्री जीवन जागृति केन्द्र पूना के आमंत्रण पर पूना पधारे । यहाँ पर आयोजित सत्संग में सभी वर्गों के प्रबुद्ध नागरिकों ने भाग लिया । यहाँ पर आयोजित विशाल जनसभाओं को संबोधित करते हुए आचार्य श्री ने कहा : "मनुष्यता अंधकार से घिरी है । और ऐसे समय में जो चुपचाप बैठा है, वह भी दोषी है । अच्छे लोग. . . . तथाकथित अच्छे लोग, सदा जीवन की धारा से दूर खड़े रहे हैं । और इन अच्छे लोगों ने मनुष्य जाति का जितना अहित किया है, उतना बुरे लोगों ने भी नहीं किया है । बुराई से न लड़ना भी बुराई में सम्मिलित होना है और जीवन से भागना भी जीवन को बुरे लोगों के हाथों में देना है । इसलिए मैं कहता हूँ कि अच्छे लोगों को जीवन से पलायन वृत्ति छोड़ देनी चाहिए । उन्हें जीवन धारा के मध्य में खड़ा होना चाहिए ताकि जीवन को सुंदर और सत्य बनाया जा सके । उनके जीवन में होने. . . . . जीवन के प्रति उनकी प्रतिबद्धता से पृथ्वी को स्वर्ग बनाया जा सकता है । क्योंकि यह पृथ्वी उनके पलायन से ही नर्क बन गई है ।"

★

"आनंद निकट है । आत्मा निकट है । अमृत निकट है । लेकिन क्या निर्विचार में प्रवेश की कला आपको ज्ञात है ?"

सिने कलाकारों के मध्य विचार गोष्ठी :

दिनांक १४सितंबर की रात्रि श्री विजय आनंद के निवास स्थान पर आचार्य श्री के सान्निध्य में सिने-कलाकारों की एक विचार गोष्ठी का आयोजन हुआ । इसमें श्री देव आनंद ने आचार्य श्री से विभिन्न प्रश्न पूछे । आचार्य श्री ने कहा : "धर्म क्या है ? विश्वास . . नहीं । धर्म है विवेक । विश्वास तो है अंधापन और विवेक है चैतन्य । चेतना जितनी जागती हैं उतनी ही धार्मिक हो जाती है । चेतना का निद्रित होना ही अधर्म है । निद्रा में, मूर्च्छा में, बेहोशी में जीना ही अधर्म है । जागृत, चेतन और होशपूर्वक जीना ही धर्म है । इसलिए मैं जागकर जीने को कहता हूँ और स्मरण रहे कि हम सब सोये सोये से जी रहे हैं । हमारे चित्त जब तक स्वप्नों और विचारों से भरे हैं तब तक हम निद्रित ही हैं । विचार-शून्य चेतना ही प्रबुद्ध होती है. . . जागृत होती है । इसलिए विचारों को क्षीण करें । विचारों से मुक्त हों. . . . . विचारों का अतिक्रमण करें । निर्विचार में प्रतिष्ठित होते ही परमात्मा के. . . . . आनंद के . . . . अमृत के द्वार खुल जाते हैं ।"

• • •

आचार्यश्री रजनीश के आगामी देश व्यापी कार्यक्रम :

दिनांक :	स्थान :	कार्यक्रम :	संयोजक :
९, १०, ११ एवं १२ दिसंबर १९६९	जूनागढ़	साधना शिविर	डा. एच. पी. शुक्ल जीवन जागृति केंद्र, अनवर स्ट्रीट, काठियावाड़, **जूनागढ़.**
१३ दिसंबर	बंबई	—	श्री ईश्वर बाबू, जीवन जागृति केंद्र, रूम नं. ५३, एम्पायर बिल्डिग, डा. डी. एन. रोड, **बंबई : १** फोन : २६४५३०.
२२ दिसंबर	बंबई	—	" " "
२३, २४, २५ एवं २६ दिसंबर	अहमदाबाद	सत्संग	श्री जे. एम. ठाकर, जीवन जागृति केंद्र, C/o डायचेम कार्पोरेशन खादिया चार रास्ता, **अहमदाबाद–१** फोन : ७७५४७.
२७ दिसंबर	बंबई	—	श्री ईश्वर बाबू, जीवन जागृति केंद्र, रूम नं. ५३, एम्पायर बिल्डिग, डा. डी. एन. रोड, **बंबई : १** फोन २६४५३०.
४, ५ एवं ६ जनवरी १९७०	आकोला	सत्संग	श्री ओंकारप्रसाद मिश्रा, बाबूजी देशमुख वाचनालय, **आकोला** (महा.)
१५ जनवरी	बंबई	—	श्री ईश्वर बाबू, जीवन जागृति केंद्र, रूम नं. ५३, एम्पायर बिल्डिग, डा. डी. एन. रोड, **बंबई : १**

दिनांक :	स्थान :	कार्यक्रम :	संयोजक :
१६, १७, १८ एवं १९ जनवरी	भावनगर	**सत्संग**	श्री वीरभद्र सिंह, महाराजा, **भावनगर.** (सौ.)
२० जनवरी	बंबई	——	श्री ईश्वर बाबू, जीवन जागृति केंद्र, रूम नं. ५३, एम्पायर बिल्डिंग, डा. डी. एन. रोड, **बंबई** १.
२८ जनवरी एवं १ फरवरी	दिल्ली	—	श्री लाला सुंदरलालजी, जीवन जागृति केंद्र, ४१, यू. ए. बंगलो रोड, जवाहरनगर, **दिल्ली** : ६ फोन : २२७६५५.
२९, ३० एवं ३१ जनवरी	अमृतसर	**सत्संग**	श्री चमनलाल अग्रवाल, जीवन जागृति केंद्र, २५, केनेडी एवेन्यु, **अमृतसर.**
९, १०, ११ एवं १२ फरवरी	काठमांडू	**सत्संग (संभावित)**	श्री अरुण कुमार. C/ₒ श्री केदार प्र. सिंह, एम. हाउस, पुतली सड़क, **काठमांडू**। फोन. ११५८४.
२१, २२, २३ एवं २४ फरवरी	महाबलेश्वर	**साधना-शिविर (संभावित)**	श्री माणिक बाबू बाफना, जीवन जागृति केंद्र, स्पार्टन लग्झुरी, सी-१, २४७।१४ बी., यरोडा, **पूना–६**
५ मार्च एवं १० मार्च	बंबई	——	श्री ईश्वर बाबू, जीवन जागृति केंद्र, रूम नं. ५३, डा. डी. एन. रोड, एम्पायर बिल्डिंग, **बंबई** : १
६, ७, ८ एवं ९ मार्च	राजकोट	**सत्संग**	श्री आर. अंबाणी एंड कं., जीवन जागृति केंद्र, अपोजिट जिमखाना, **राजकोट.**

मुद्रक प्रकाशक : **श्री पी. एल. महेश्वरी,** जीवन जागृति केन्द्र, एम्पायर बिल्डिंग, रूम नं. ५३, डा. डी. एन. रोड फोर्ट, बम्बई–१ मुद्रणस्थान : स्टेट्स पीपल प्रेस, बम्बई १।

छप गई ! छप गई !! छप गई !!!

गांधीजी की विचारधारा, गांधीवाद और गांधीवादियों का देश की आज की नई स्थिति के नए परिप्रेक्ष्य में यथातथ्य विश्लेषण करके हलचल मचा देनेवाली आचार्यश्री रजनीश की नई कृति

अस्वीकृति में उठा हाथ

भारत, गांधी और मेरी चिंता

मूल्य : पांच रुपये

प्राप्ति स्थान :

जीवन जागृति केन्द्र

एम्पायर बिल्डिंग, रूम नं. ५३, दादाभाई नौरोजी रोड,
बम्बई-१. फोन : २६४५३०

आचार्यश्री रजनीश की सृजनात्मक जीवन दृष्टि
का
पाक्षिक पत्र

यु क्रां द

मानसेवी सम्पादक :
अजित कुमार

एक प्रति : ६० पैसे ❀ वार्षिक शुल्क : १२ रुपये

देश के कोने कोने में विक्रय एजेन्ट नियुक्त करना है

सम्पर्क करने तथा शुल्क भेजने का पता :

अरविन्दकुमार, सदस्य युक्रांद प्रकाशन समिति,
कमला नेहरू नगर, जबलपुर (म. प्र.) फोन : २९५७

ज्योति शिखा

१५

दिसम्बर १९६९

मनुष्य के आध्यात्मिक पुनरुत्थान के लिए समर्पित

जीवन जागृति केन्द्र